संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

॥ ऋषि प्रसाद ॥

हिन्दी

वर्ष : १२
अंक : ११४
जून २००२
ज्येष्ठ मास
विक्रम.सं. २०५९
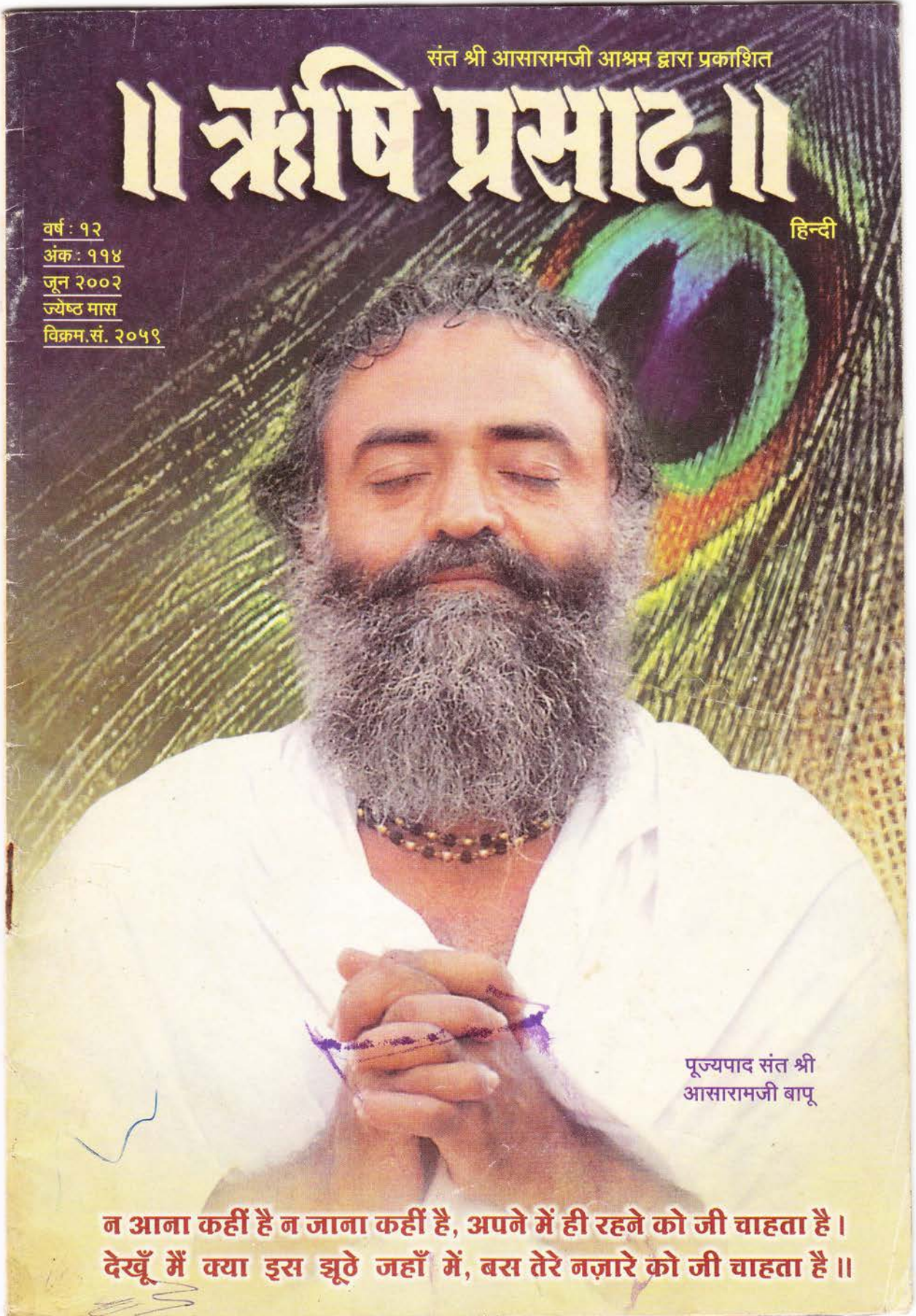
पूज्यपाद संत श्री
आसारामजी बापू

न आना कहीं है न जाना कहीं है, अपने में ही रहने को जी चाहता है।
देखूँ मैं क्या इस झूठे जहाँ में, बस तेरे नज़ारे को जी चाहता है ॥

ताली बजाकर कीर्तन से, जीवनशक्ति-विकास। गुरुवर के संग कीर्तन से तन-मन में उल्लास ॥ पूज्य बापूजी के सत्संग में कीर्तन-लाभ लेते हुए करनालवासी (हरियाणा).

स्वर्ग के अमृत से बढ़कर जिस सत्संग-अमृत की महिमा शास्त्रों ने गायी है, उस दिव्य अमृत का पान करते हुए अमृतसरवासी (पंजाब).

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १२
अंक : ११४
९ जून २००२
ज्येष्ठ मास, विक्रम संवत् २०५९

सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रु. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(३) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(३) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) पंचवार्षिक : US $ 80
(३) आजीवन : US $ 200

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
e-mail : ashramamd@ashram.org
web-site : www.ashram.org

प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसारामवाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७.३० से ८ एवं शनिवार और रविवार सुबह ७.०० से ७.३०
संस्कार चैनल पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २.०० से २.३० एवं रात्रि १०.०० से १०.३०

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक और स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

हे गुरुवर...

हे गुरुवर ! तुमको कोटि-कोटि अभिनन्दन !
हे युगद्रष्टा ! हे महायति !! पदवन्दन !!!

हे महातिमिर के अंशुमालि ! हे युगपरिवर्तक चिर महान !
हे शक्तिपुंज ! साहस अमोघ ! पदवन्दन ॥१॥
हे गुरुवर...

हे भारत हृदय के स्वाभिमान ! हे नवजीवन के नव विधान !
हे अपमानित के सजग त्राण ! पदवन्दन ॥२॥
हे गुरुवर...

हे राष्ट्र नौका के कर्णधार ! हे लीलाशाह के मृदु दुलार !
हे सत्य सिन्धु ! हे वीरवृत्ति ! पदवन्दन ॥३॥
हे गुरुवर...

हे दिव्य ज्योति शुभ आराधन ! हे पूज्य चरण अति पावन !
हे राष्ट्रपुरुष ! हे महाप्राण ! पदवन्दन ॥४॥
हे गुरुवर...

- प्रशान्त चौधरी, जोधपुर (राजस्थान).

*

सत्संग बिना...

सत्संग बिना सोचो मानव, जग में यह ज्ञान कहाँ होगा ?
उस ज्ञान की छाया में जाकर, अपना कल्याण वहाँ होगा ॥
सत्संग में संत वचनरूपी, सत्य ज्ञान की गंगा है बहती।
इसमें अवगाहन यदि न किया, सत्यपथ का ज्ञान कहाँ होगा ?
सत्संग बिना...

मुक्ति का मार्ग भक्ति है, जो युक्ति बिना नहीं होती है।
युक्ति से भक्ति यदि न किया, सत्यपथ का ज्ञान कहाँ होगा ?
सत्संग बिना...

संतों से सद्गुण हैं आते, जिससे जीवन सुखमय होगा।
जिसमें है सेवाभाव नहीं, उसे सुख-चैन कहाँ होगा ?
सत्संग बिना सोचो मानव, जग में यह ज्ञान कहाँ होगा ?

- श्री कृष्णनन्दन, नई दिल्ली ।
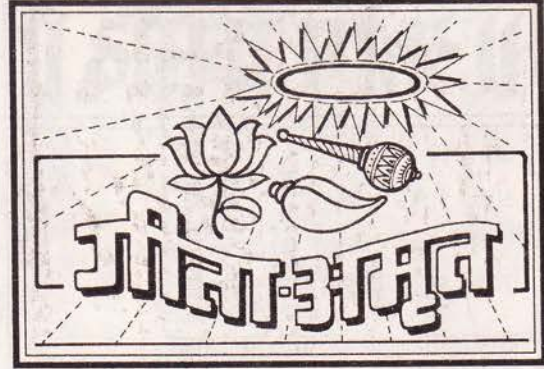
कर्मयोग की सिद्धता

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥

'हे धनंजय ! जिसने कर्मयोग की विधि से समस्त कर्मों को परमात्मा में अर्पण कर दिया है और जिसने विवेक के द्वारा समस्त संशयों का नाश कर दिया है, ऐसे वश में किये हुए अन्तःकरणवाले पुरुष को कर्म नहीं बाँधते।' **(गीता : ४.४१)**

संसार में जो भी जन्म-मृत्यु हो रहे हैं, सुख-दुःख हो रहे हैं, वे सारे कर्मों के खेल हैं। **कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके...** कर्मों के बंधन से ही हम मनुष्यलोक में आते हैं । किंतु यदि कर्म करने का सही ढंग आ जाय तो ये ही कर्म हमें सर्व बंधनों से छुड़ाकर मुक्ति के सिंहासन पर भी प्रतिष्ठित कर सकते हैं ।

योगसंन्यस्तकर्माणं... जिसने कर्मयोग की विधि से समस्त कर्मों को परमात्मा में अर्पण कर दिया है उसे कर्म बंधन में नहीं बाँधते। यही कर्मयोग है। अगर यह कर्मयोग की कला आ जाय तो किया गया कर्म, कर्मयोग बन जाता है और परमात्मा को समर्पित हो जाता है अन्यथा वही कर्म बंधन का कारण बन जाता है ।

जैसे, तलवार चलाने की कला आती है तो तलवार दुश्मन का काम तमाम कर सकती है अगर कला नहीं आती है तो खुद का पैर भी काट सकती है। विद्युत का उपयोग करने की कला है तो विद्युत

अंधकार दूर कर सकती है, तरह-तरह के साधनों को चला सकती है। लेकिन अगर उपयोग करने की कला नहीं है तो स्पर्श करने पर मौत भी ला सकती है।

ऐसे ही ये कर्म हैं जो अपने, पितरों के, कुटुंबियों के और समाज के भवबंधन को काटने में सहायक होते हैं परन्तु अगर कर्म करने की कला नहीं है तो अपनी, कुटुंब की और समाज की हानि भी करते हैं।

जिसने कर्म को कर्मयोग में परिणत कर दिया वह कर्म करते हुए भी बंधायमान नहीं होता है।

वास्तव में कर्म प्रकृति में होते हैं। देह, मन तथा साधनों से कर्म होते हैं और कर्म करने की सत्ता परमात्मा की होती है। कर्म होते हैं साधनों से और साधन मिलते हैं संसार से। फिर भले शरीर साधन हो या मन साधन हो, चाहे रुपया साधन हो या शुद्ध भाव साधन हो। कर्म होते हैं साधनों से, साधन हैं प्रकृति के और प्रकृति है परमात्मा की।

'परमात्मा की वस्तुएँ परमात्मा के ही संसार के काम आ गयीं, इसमें मैं कर्त्ता किस बात का ?' ऐसा विचार करके जो शास्त्राज्ञानुसार कर्म करता है उसके कर्म से कर्म कट जाते हैं और वह कर्मयोग में सफल होकर आत्म-साक्षात्कार कर लेता है।

कर्मयोगी ऐसा मानता है कि यह शरीर पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा और अभी भी नहीं की ओर जा रहा है। ऐसे ही आदि और अंतवाली सब वस्तुएँ बदलनेवाली हैं। संसार की इन वस्तुओं को संसार की सेवा में लगाना ही हमारा स्वभाव होना चाहिए, हमारा कर्त्तव्य होना चाहिए और हमारा आत्मा परमात्मा से अभिन्न है, अतः उस आत्म-तत्त्व को जानने के लिए आत्मविचार करना चाहिए।

शरीर से जो भी कर्म करें, उन कर्मों को ईश्वरार्पित करते हुए परहित के लिए करें। कोई भी काम अपने व्यक्तिगत हित के लिए न करें। अगर व्यक्तिगत हित का विचार छोड़कर काम किया जाता है तो वह काम दिव्य हो जाता है, वही कार्य महान हो जाता है।

'बापूजी ! हम अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए कर्म न करें तो हम जीयेंगे कैसे ?'

अगर आप व्यक्तिगत लाभ की इच्छा छोड़कर कर्म करते हो तो आपके योगक्षेम की जवाबदारी अनंत की है और जब वह आपका योगक्षेम वहन करेगा तो आपका जीवन दिव्य हो जायेगा।

'महाराज ! जब अपने हित के लिए कर्म नहीं करना है तो कर्म करें ही क्यों ?'

कर्म किये बिना कोई रह नहीं सकता है। अपने हित का उद्देश्य होगा तो कर्म बाँधेगा। अपना हित छोड़कर परहित के लिए कर्म करेंगे तो वे कर्म आपके कर्मबंधन काट देंगे।

अपने हित के लिए जो कर्म किये जाते हैं उन कर्मों में फल की आसक्ति होती है। फलासक्ति, भोगासक्ति और कर्मासक्ति ये जीव को बाँधनेवाली होती हैं। आसक्ति से किये हुए कर्म से कर्त्ता की योग्यता कुंठित होती है। अनासक्त होकर किये गये कर्म से दिव्यता निखरती है।

सेठ करोड़ीमल बड़े लोभी थे। उनकी पत्नी सत्संगी थी। उसने देखा कि करोड़ों रुपये हो गये हैं फिर भी इनका लोभ छूटा नहीं है। एक बार अपने पति को समझा-बुझाकर कथा में ले गयी।

कथाकार पंडित दान की महिमा का बड़े सुंदर ढंग से वर्णन करते थे। करोड़ीमल ने दान की महिमा सुनी और सुनते-सुनते डोलने लगे। पत्नी बड़ी खुश हो गयी कि 'चलो, अब ये भक्त बन जायेंगे।' कथा पूरी होने पर दोनों घर पहुँचे। पत्नी ने बातों-बातों में पूछ लिया कि 'दान की महिमा सुनी ?'

सेठ बोले : ''बहुत बढ़िया कथा थी। अब मैं कल से ही दान लेना शुरू कर दूँगा।''

पत्नी बेचारी और दुःखी हो गयी कि कथा सुनकर, दान देकर कर्मबंधन काटने की जगह पर सेठ ने तो कर्मबंधन बढ़ाने की बात सोच ली ! और अधिक धन कमाने का लोभ बढ़ा लिया...

किसीको धनवान देखकर अगर प्यार किया तो आपकी आसक्ति बढ़ जायेगी, किसीको सत्तावान देखकर प्यार करोगे तो आपका अंतःकरण भयभीत रहेगा, किसीकी सुंदरता देखकर उससे प्यार करोगे तो कामविकार बढ़

जायेगा और कोई कभी-न-कभी आपके काम आयेगा इसलिए प्यार करोगे तो लोभ, कपट और दीनता बढ़ जायेगी। अतः आप किसीसे कुछ लेने की इच्छा न रखें वरन् 'मुझसे कोई परहित का कार्य हो जाय तो कितना अच्छा !' ऐसी भावना रखें।

जो धनवान होता है उससे अगर हम मीठी-मीठी बातें करते हैं तो समझो, हमारे मन में धन का लालच है। अगर हम सत्ताधीश के आगे गिड़गिड़ाते हैं तो समझो, हमारे मन में अपना कोई कार्य करवाने का लालच है।

चाहे कोई धनवान हो या सत्तावान हो, आप उससे कुछ लेने की इच्छा न रखो वरन् उसके हित की भावना रखो। आप कुछ लेने के लिए, कुछ पाने के लिए कोई प्रवृत्ति न करो वरन् किसीका हित हो इसलिए प्रवृत्ति करो। फिर देखो जीने का मजा... आपके प्रारब्ध में जो कुछ होगा वह तो खिंचा चला ही आयेगा। आप चाहो तो उसका उपयोग करो अथवा ठुकरा दो आपकी मर्जी।

मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है, फल भोगने में नहीं। कर्म करके फल पाने की इच्छा छोड़ते ही कर्म करने की आसक्ति छूट जायेगी। कर्म ऐसे करो कि कर्म करने से आपका मन उपराम हो जाय, विचार ऐसे करो कि विचारों का चलना बंद हो जाय, देखो ऐसा कि देखने की वासना मिट जाय, सुनो ऐसा कि संसार का सुनना खत्म हो जाय... फिर जो सुनो वह ईश्वरसम्बन्धी ही हो, जो देखो वह ईश्वरमय ही दिखायी पड़े, जो बोलो वह ईश्वर के विषय में ही हो, जो विचार करो वह ईश्वरसम्बन्धी ही हो और जो करो वह ईश्वरमय ही हो। ऐसा करने से कर्मबंधन कट जायेंगे और आपका कर्मयोग सिद्ध हो जायेगा।

निज धर्म में तत्पर रहे, पर धर्म तजना चाहिए।
सब कर्म करके कृष्ण अर्पण, कृष्ण भजना चाहिए।
करता कराता ईश है, निश्चय समझना चाहिए।
कर्त्ता स्वयं बन कर्म में, फिर क्यों उलझना चाहिए।
मन इन्द्रियाँ सब जीत, निज उद्धार करना चाहिए।
डूबे हुए इस आपका, उपकार करना चाहिए।

दरिद्र कौन है ?

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

मैंने सुनी है एक कहानी :

एक बाबाजी किसीके यहाँ भोजन करने हेतु गये। भोजन के बाद उसने आग्रह करके दक्षिणा के रूप में बाबाजी को चार पैसे दिये। बाबाजी ने सोचा कि 'अब इस चार पैसे का क्या करना चाहिए ?'

उन्होंने किसी ब्राह्मण से पूछा : ''इस चार पैसे का क्या सदुपयोग हो सकता है ?''

ब्राह्मण इज्जत-आबरूवाला था। बोला : ''चार पैसे का क्या सदुपयोग ? इससे होम-हवन तो न हो सकेगा। किसी दरिद्र को दे देना।''

बाबाजी ने एक दरिद्र के पास जाकर कहा : ''मैं चार पैसे किसी दरिद्र को देना चाहता हूँ। दरिद्र कौन है ?''

उस जमाने में अपने को दरिद्र अथवा भिखमंगा कहलवाना कोई भी पसंद नहीं करता था। उस गरीब ने कहा :

''हम दरिद्र नहीं हैं।''

विरक्त बाबा चौराहे पर खड़े हो गये और दल-बल सहित गुजरते राजा से बोले : ''ये ले लो।''

राजा ने सवारी से उतरकर बाबाजी को प्रणाम किया और बाबा ने राजा के हाथ में चार पैसे रखते हुए कहा :

''इतने दिनों तक ढूँढ़ा लेकिन कोई दरिद्र न मिला। आप धन के लिए जा रहे हैं तो मेरी तरफ से इतना ले लीजिये। ताकि मेरी चिंता मिटे।''

राजा : ''मेरे पास तो इतना बड़ा राज्य है, विशाल सेना है, कई खजाने हैं तो मैं दरिद्र कैसे ?''

बाबाजी : ''जो हिंसा से, बलात्कार से, झूठ-कपट और बेईमानी से किसीका धन हरता है, उससे बढ़कर दरिद्र दूसरा कौन हो सकता है ?

दरिद्र वह नहीं है जिसके पास धन नहीं है। वरन् जैसे प्यासा आदमी पानी के लिए छटपटाता है, वैसे ही धन होते हुए भी जो और धन पाने के लिए छटपटाता है वह दरिद्र है।''

आद्यशंकराचार्य ने कहा है : **कोऽवा दरिद्रः विशालतृष्णः ।** 'दरिद्र कौन है ? जिसकी तृष्णा विशाल है।'

जिसकी इच्छा-वासनाएँ ज्यादा हैं, जिसकी आवश्यकताएँ ज्यादा हैं वह दरिद्र है।

धन की कमी या अधिकता से कोई निर्धन या धनवान नहीं होता। संतोष की कमीवाला आदमी ही निर्धन है और संतोषी आदमी ही धनवान है। समझ की कमी से आदमी निर्धन होता है और सच्ची समझ होने पर आदमी धनवान होता है।

धन किसलिए है चाहता तू आप मालामाल है।
सिक्के सभी जिससे बने तू वह महा टकसाल है॥
चाह न कर चिंता न कर चिंता ही बड़ी दुष्ट है।
है श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ मगर चाह करके भ्रष्ट है॥

किसीने कहा है :

चाह चमारी चूहड़ी अति नीचन की नीच।
तू तो पूरण ब्रह्म था जो चाह न होती बीच॥

जब हृदय में चाह आ जाती है तब आदमी लघु हो जाता है। जिस समय तृष्णा हृदय पर कब्जा कर लेती है, उस समय आदमी तुच्छ हो जाता है और जिस समय अनजाने में भी तृष्णा नहीं रहती उस समय आदमी के चित्त में आनन्द, प्रेम और दिव्यता छलकती है।

वासना मिटाने का पुरुषार्थ ही वास्तविक पुरुषार्थ है। वासना मिटाने का अर्थ यह नहीं कि जैसी इच्छा हुई वैसा कर लिया। इससे वासना मिटेगी नहीं वरन् गहरी उतर जायेगी। इसलिए ज्ञान का प्रकाश और विवेक का सहारा लेकर वासना को निवृत्त करने का यत्न करना चाहिए।

'यह मिल गया, अब यह और मिल जाय...' ऐसी चाह उचित नहीं। विवेक का उपयोग करें कि जो चाहते हैं उसकी आवश्यकता है कि इच्छा ? **जो आवश्यकता होगी वह तो अपने-आप सहज में पूरी होती जायेगी। उसके लिए बेचैनी नहीं रहेगी और अगर व्यर्थ की इच्छा होगी तो पूर्ण होने के बाद भी अहंकार या आसक्ति बढ़ा देगी।**

बिनजरूरी इच्छा अहंकार बढ़ा देती है। शरीर का गुजारा चलाने के लिए रोजी-रोटी, वस्त्र और मकान की आवश्यकता है। 'इसके पास एक फ्लैट है तो मेरे पास दो हैं।' इस प्रकार के भाव से एक फ्लैटवाले के आगे दो फ्लैटवाले का अहंकार खड़ा हो जायेगा। पड़ोसी की पत्नी लड़ाकू होगी तो लगेगा, 'हम भाग्यशाली हैं कि अच्छी पत्नी मिली है।'

लेकिन भैया ! दो फ्लैट भी कब तक और अच्छी पत्नी भी कब तक ? पत्नी भी कभी बीमार पड़ेगी तो कभी मायके चली जायेगी। इसी प्रकार या तो धन चला जायेगा या धन को छोड़कर आप चले जायेंगे। जहाँ चाह रखी, वहीं नियति कुछ-न-कुछ मुसीबत जरूर खड़ी कर देगी। भोलेबाबा ने कहा है :

मानव तुझे नहीं याद क्या ? तू ब्रह्म का ही अंश है।
कुल-गोत्र तेरा ब्रह्म है, सद्ब्रह्म तेरा वंश है॥
संसार तेरा घर नहीं, दो-चार दिन रहना यहाँ।
कर याद अपने राज्य की, स्वराज्य निष्कंटक जहाँ॥

अपनी असलियत को जान लो कि आप वास्तव में कौन हो ? आपका वास्तविक स्वरूप क्या है ? आप कितने महिमावान हो ? आप कितने धनवान हो ?

फिर चाहे आयकरवाले छापा मारें या कोई बम-धड़ाका करे लेकिन वे आपका बाल तक बाँका नहीं कर सकते, आप (आपका आत्मा) इतने महान हो।

अपनी महिमा को नहीं जानते इसीलिए आप परेशान रहते हो। सात्त्विक साधना और दिव्य स्वभाव के अपने आत्मप्रभाव को नहीं जानते इसीलिए आप परिस्थितियों के गुलाम हो जाते हो, यह जानते हुए भी कि परिस्थितियाँ सदा एक जैसी नहीं रहती हैं।

जो विश्वास अपने अंतर्यामी परमात्मा पर करना चाहिए वह विश्वास अगर अपनी तंदुरुस्ती पर किया तो जरूर बीमारी आ जायेगी। जो विश्वास अपने आत्मस्वरूप पर करना चाहिए वह अगर धन पर किया तो धन में गड़बड़ हो जायेगी। जो विश्वास अपने ईश्वर पर करना चाहिए वह विश्वास

यदि आपने मित्रों-सम्बन्धियों पर किया तो वे अवश्य धोखा दे देंगे। जो विश्वास अपने स्वरूप पर होना चाहिए वह विश्वास अगर व्यक्तियों, स्थूल परिस्थितियों तथा स्थूल पदार्थों पर किया तो अवश्य पछताना पड़ेगा।

यह दैवी सिद्धांत है कि ज्यों-ज्यों आप अपनी आत्मा पर निर्भर होते हो, त्यों-त्यों जगत की चीजें आपकी सहायता हेतु, सेवा के लिए आकर्षित हो जाती हैं और ज्यों-ज्यों आप अपने अंतर्यामी से विमुख हो जाते हो और जगत की चीजों पर भरोसा करने लगते हो, त्यों-त्यों वे चीजें आपसे दूर भागने लगती हैं। यदि आप सूर्य की तरफ आगे बढ़ते हो तो छाया आपके पीछे आती है और यदि सूर्य को पीठ देकर छाया को पकड़ने जाते हो तो छाया दूर-दूर भागती है।

अतः सदैव अपने अंतर्यामी ईश्वर पर भरोसा रखें। अपनी इच्छाएँ-वासनाएँ घटाते जायें और ईश्वरप्रीति बढ़ाते जायें क्योंकि इच्छा ही मनुष्य को सब होते हुए भी दरिद्र बना देती है। जिसके पास बाहर का पूरा साम्राज्य होते हुए भी अगर भीतर में वासना है तो वह सम्राट होते हुए भी कंगाल है और जिसके पास ठीक से रहने को झोंपड़ा नहीं है, ठीक से खाने को अन्न नहीं है, ठीक से पहनने को वस्त्र नहीं है फिर भी यदि उसके जीवन में कोई इच्छा-वासना नहीं है तो वह परम धनवान है। उसके जैसा सुखी त्रिलोकी में कोई नहीं...

प्रतीति संसार की होती है, प्राप्ति परमात्मा की होती है। माया दुस्तर है लेकिन मायापति की शरण जाने से माया तरना सुगम हो जाता है।

ईश्वर किसी मत, पंथ, मजहब की दीवारों में सीमित नहीं है। वेदान्त की दृष्टि से वह प्राणिमात्र के हृदय में और अनन्त ब्रह्माण्डों में व्याप रहा है। केवल प्रतीत होनेवाली मिथ्या वस्तुओं का आकर्षण कम होते ही साधक उस सदा प्राप्त ईश्वर को पा लेता है।

जितने जन्म-मरण हो रहे हैं वे प्रज्ञा के अपराध से हो रहे हैं। अतः प्रज्ञा को दैवी सम्पदा से सम्पन्न करके यहीं मुक्ति का अनुभव करो।

(आश्रम की पुस्तक 'जीते-जी मुक्ति' से)

परोपकार की महिमा

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में आता है :

'ज्ञानवान सबसे ऊँचे पद पर विराजता है। वह परम दया की खान होता है। जैसे मेघ समुद्र से जल लेकर वर्षा करते हैं तो उस जल का उत्पत्ति स्थान समुद्र ही होता है, ऐसे ही जितने लोग दयालु दिखते हैं वे ज्ञान के प्रसाद से ही दया करते हैं।'

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जब लग घट में प्राण ॥

जितने भी पृथ्वी पर बलवान हैं, विद्वान हैं, यशस्वी हैं, तेजस्वी हैं उन सबमें ज्ञानवान पूजने योग्य हैं क्योंकि वे भगवद्ज्ञान से संपन्न हैं और जिनके हृदय में भगवद्ज्ञान का उदय हुआ है उनके हृदय में दया और शांति बनी रहती है।

जितनी दया और शांति ज्यादा, उतना ही परमात्म-सुख ज्यादा होता है। जितना परमात्म-सुख ज्यादा, उतना ही सामर्थ्य ज्यादा होता है और जितना सामर्थ्य ज्यादा होता है उतनी ही परदुःखकातरता ज्यादा होती है।

अपने दुःख में रोनेवाले मुस्कराना सीख ले।
दूसरों के दुःख-दर्द में आँसू बहाना सीख ले ॥
जो खिलाने में मजा है आप खाने में नहीं।
जिंदगी में तू किसीके काम आना सीख ले ॥

जो दूसरों का दुःख मिटाकर आनंद पाता है उसको अपना दुःख मिटाने हेतु अलग से मेहनत नहीं करनी पड़ती। बिना करुणा के परदुःखकातरता का सद्गुण नहीं खिलता, बिना परदुःखकातरता के सत्त्वगुण नहीं बढ़ता और जब तक जीवन में सत्त्वगुण नहीं आता, तब तक परमात्म-सुख और शांति नहीं

मिलती । जिन्होंने परमात्मज्ञान पाया है उनमें दया और शांति स्वाभाविक ही रहती है । जैसे सागर के पानी में जलचर स्वाभाविक ही रहते हैं, ऐसे ही ज्ञानवान के हृदय में शांति और परोपकार की वृत्ति स्वाभाविक ही रहती है ।

श्री वशिष्ठजी महाराज ने तो यहाँ तक कहा है कि ' हे रामजी ! जिस देश में ज्ञानवानरूपी वृक्ष की शीतल छाया न हो उस नगर, उस देश में नहीं रहना ।'

जिनके हृदय में परमात्म-सुख प्रकट हुआ है ऐसे संतों के निकट जाने से हमें ज्ञान मिलता है, शांति मिलती है और सत्प्रेरणा मिलती है । सत्यस्वरूप ईश्वर का जिन्होंने अनुभव कर लिया है, ऐसे महापुरुषों के सान्निध्य की बड़ी भारी महिमा है । कबीरजी ने भी कहा है :

तीरथ नहाये एक फल संत मिले फल चार।
सद्गुरु मिले अनंत फल कहत कबीर विचार ॥

जिनको सद्गुरु का ज्ञान पच गया है, उनका यह निश्चय रहता है कि आत्मा-परमात्मा ही सत्य है । पुण्यात्मा को सदा पुण्यमय निश्चय में ही रुचि होती है । पुण्यात्मा अपने आत्म-परमात्म स्वभाव का तैलधारवत् चिंतन करते हैं ।

जो धर्मात्मा हैं, श्रेष्ठ पुरुष हैं, पवित्रात्मा हैं उनकी रुचि कथा-कीर्तन, हरि-चर्चा, हरि-ध्यान और हरि-ज्ञान में ही रहती है । उनके लिए इस संसार के सुख-दुःख, मान-अपमान और हानि-लाभ सब खेलमात्र हैं ।

जो पुण्यात्मा हैं उनकी रुचि स्वभावतः सेवा में, परोपकार में होती है । वे भोग, विकारी सुखों के बिना भी अंदर से तृप्त रहते हैं और ईश्वर को धन्यवाद देते हुए जीते हैं । वे बदनामी सहकर भी भलाई के कार्य करते हैं । वे इल्जाम सहते हैं फिर भी मुस्कराते रहते हैं । दुःख सहते हैं और सुख बाँटते हैं ।

जिसको अपने जीवन में उन्नति चाहिए उसको परोपकार करना चाहिए । लौकिक और पारमार्थिक उन्नति का मूल है परोपकार । जो निष्काम सेवा नहीं कर सकता वह ठीक से आध्यात्मिक उन्नति भी नहीं कर सकता है ।

जो सद्गुरु हैं, वे परमानन्द को जीवन में प्रकट करनेवाले हैं, अद्वय ज्ञान के अवतार हैं, समस्त समस्याओं से मुक्त सत्पुरुष हैं, आकाशवत् अनन्त हैं, इनके सिवाय दूसरा कोई भी नहीं है, ये निरन्तर अलुप्त हैं, माया-अविद्या तथा भ्रान्तियों से मुक्त हैं, अपरिवर्तनशील सत्य हैं, सम्पूर्ण कल्पनाओं के अधिष्ठान हैं, परम स्वतन्त्र हैं, देह में दिखते हुए भी आकाश को ढाँपे हुए हैं, ऐसे व्यापक सद्गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूँ ।

इनका साकार सान्निध्य संयम, सदाचार, स्नेह, सहानुभूति सिखाकर सत्य में प्रतिष्ठित करनेवाला है । इनका वास्तविक स्वरूप सच्चिदानंद है । मैं मेरे सद्गुरु के साकार स्वरूप का आज्ञा चक्र में ध्यान करके शांति-आनंद में उल्लसित हो रहा हूँ । इनके व्यापक ब्रह्मस्वभाव, ब्रह्मरस, ब्रह्मसुख में एकाकार होने की प्रीतिपूर्वक प्रार्थना करता हूँ और वे मुझे बुद्धियोग दे रहे हैं ।

ये जग है चलाचली का मेला, मैं ब्रह्म हूँ सबसे अकेला । ॐ... ॐ... ये जगत है सपना, आत्मा-ब्रह्म है अपना... ॐ... ॐ... जय हो गुरुदेव, आत्मदेव तुम्हारी जय हो ।

हम अपना अहं और आग्रह अपने सच्चे स्वरूप में विलीन कर रहे हैं । मंगल घड़ियाँ, शुभ समाचार, परम विश्रांति । इस प्रकार अपने गुरुदेव से आंतरिक सम्बन्ध जोड़कर गुरुप्रसाद से सम्पन्न होते जायें । दिव्य दृष्टा, दिव्य समझ के दाता सद्गुरु की आत्मा से अपना अंतःकरण एक करके-

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥

की पूर्णता को पा लें ।

अज्ञान दारू के नशे में, भूल 'मैं', निज को गया ।
आसक्त होकर भोग में, मरता रहा, जन्मा किया ।।
करता स्मरण था दुःख का, होता बहुत ही था दुःखी ।
हैं धन्य श्री गुरुदेवजी, उपदेश दे कीन्हा सुखी ।।

- श्री भोले बाबा

ईश्वरीय अंश कैसे विकसित करें ?

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

पशुता हर जीव में होती है, मानवता मनुष्य में होती है और ईश्वरत्व जड़-चेतन सभीमें होता है। मनुष्य एक ऐसी जगह पर खड़ा है कि उसके एक तरफ पशुता है तो दूसरी तरफ ईश्वरत्व है और मनुष्यता उसे लानी पड़ती है। खुद मनुष्य-शरीर में होते हुए भी उसमें मनुष्यता हो, यह जरूरी नहीं है।

मनुष्य दो पैरवाले प्राणी के रूप में जन्मता है और उसमें मनुष्यता आती है व्रतों से, नियमों से, साधन-भजन से। मनुष्यता आती है तभी सद्गुरुओं का ज्ञान हज़म होता है। सद्गुरु का ज्ञान पशु को हज़म नहीं होता।

मेरे आश्रम की गाय मुझे लात मार सकती है। मेरे आश्रम का बैल मुझे गिरा सकता है क्योंकि वह पशु है। उसको पता नहीं है कि 'मैं आश्रम का चारा खाता हूँ ... बापू मेरी भलाई चाहते हैं...'

मैं एक बैल को प्यार करता था, स्नेह करता था। विनोद में उसके साथ थोड़ी कुश्ती भी करता था। एक बार उसने कुश्ती में ऐसा गिराया कि 'फ्रैक्चर' हो गया तो भी मैंने उसको लाठी नहीं मारी क्योंकि वह पशु है।

मनुष्य-देह में पशुता भी छुपी है, मानवता भी छुपी है और देवत्व भी छुपा है तो क्या करना चाहिए ?

पशुता को क्षीण करना और मनुष्यता को निखारना चाहिए। फिर मनुष्यता को निखारते-निखारते ईश्वरत्व को निखारना चाहिए।

पशु में और मनुष्य में यही फर्क है कि पशु जैसा मन में आया वैसा करते हैं। फिर भले ही उसे डंडे खाने पड़ें, जूते मारे जायें अथवा मरना ही क्यों न पड़े ! पतंगे दीपक में जलकर मर जाते हैं, मछली काँटे में फँसकर मर जाती है, भ्रमर कमल में फँसकर मर जाता है, हिरण सुर-ताल-लय में सुधबुध खोकर अपनी जान गँवा देता है, हाथी घास की हथिनी के पीछे फँस जाता है और सारी जिंदगी महावत की गुलामी करता है। ऐसे ही मनुष्य भी शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श के पीछे जीवन पूरा कर देते हैं तो उन्हें क्या करना चाहिए ?

मनुष्य को चाहिए कि शास्त्र और धर्म के अनुसार अपनी मनुष्यता विकसित करते-करते ईश्वरत्व को विकसित करे। ऐसा नहीं कि भ्रम में फँस जाय कि 'मैं ब्रह्म हूँ... मैं आत्मा हूँ...' और मनमानी करने लग जाय तथा स्वयं पशुता में गिर जाय ! पशुता में गिर जायेगा तो ब्रह्म क्या रहेगा ? मनुष्यता से गिर जायेगा तो ईश्वरत्व में कैसे पहुँचेगा ?

मनुष्य-शरीर में संयम का पालन नहीं किया तो ईश्वरत्व को कैसे पायेगा ? **संयम-नियम का पालन करने से सच्चाई आती है और सच्चाई से सत्य को जानने की जिज्ञासा होती है जिससे श्रद्धा दृढ़ होती है, बुद्धि में सत्त्व आता है; जो सत्यस्वरूप ईश्वर में स्थिति कराता है।** जो सच्चाई का आश्रय नहीं लेता है उसको सत्य की जिज्ञासा उत्पन्न नहीं होती है। कोई सत्य का उपदेश सुनकर कह दे कि 'मैं ब्रह्म हूँ' तो इससे काम नहीं चलता है।

सत्य की तीव्र जिज्ञासा के बिना आदमी वफादारी से गुरु की शरण नहीं जाता है। जब कभी मौका मिलेगा तब इंद्रियलोलुप व्यक्ति गद्दारी कर लेगा और जो अपने साथ गद्दारी करता है, वह गुरु के साथ भी गद्दारी कर सकता है।

अतः अपने जीवन में कड़क नियम रखो, सजगता रखो, कड़क निगरानी रखो। जैसे, आपके पास अगर हीरे-जवाहरात हैं तो आप उनकी ऐसी निगरानी रखते हैं कि कोई उन्हें चुरा न ले जाय। ऐसे ही हीरे-जवाहरातों से भी ज्यादा कीमती

आपका जीवन है। अतः काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, ईर्ष्या, घृणा आदि विकार आपके कीमती जीवन को कहीं चुरा न लें इसकी पहरेदारी आप अवश्य रखें। अपने मन को विकारों में गिरने के लिए कभी भी ढील न दें। पूज्यपाद लीलाशाह बापू की **'मन को सीख'** पुस्तक बार-बार पढ़ें ताकि मन को नियंत्रण में रखा जा सके।

मन को नियंत्रण में रखें तथा बुद्धि को परमात्मा में लगायें तभी ईश्वरत्व में स्थिति हो सकती है। ईश्वरत्व में स्थिति के लिए अपनी बुद्धि को जगत के नश्वर पदार्थों से हटाकर अमर आत्मा में लगाना चाहिए। आत्मविषयिणी बुद्धि करनी चाहिए। आत्मा के विषय में ही बार-बार सुनें, उसीका मनन करें तथा खानपान और आचार-विचार में संयम रखें।

पुण्यपुंज होने से सत्संग की प्राप्ति होती है और सात्त्विक विवेक जगता है तभी परमात्मा को पाने की प्यास जगती है। जिसका आचरण ऊँचा है और पुण्य अधिक हैं उसे ही आत्मा-परमात्मा को जानने-पाने की इच्छा होती है। दूसरों को तो सिर खपा-खपाकर उठाना पड़ता है। **एक-दो व्यक्ति नहीं, लाखों-लाखों व्यक्ति महापुरुषों के प्रयत्न से थोड़े ऊपर उठते हैं परन्तु जिनका स्वयं का प्रयत्न है, उनको महापुरुष मिलते हैं तो वे जल्दी ऊपर उठ जाते हैं।** इसको आत्मविषयिणी बुद्धि बोलते हैं।

आत्मविषयिणी बुद्धि बनाना सबसे ऊँची बात है। ईश्वरीय अंश जगाना सबसे ऊँची बात है।

ईश्वरीय अंश कैसे जगता है और पशुता कैसे मिटती है ?

मनुष्य की पशुता अपने-आप नहीं छूटती। जब वह अपने मन को सद्गुरु की आज्ञा में चलायेगा तब पशुता आसानी से छूटेगी। बच्चा बेवकूफी कब छोड़ता है ? जब शिक्षक के कहे अनुसार चलता है, तब उसकी बेवकूफी छूटती है और वह विद्वान बनता है। ऐसे ही शिष्य सद्गुरु की आज्ञा में चलता है, तब पशुता और मानवता को बाधित करके ईश्वरीय अंश जगा पाता है। इसीलिए कहा गया है :

गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परम मंगलम्।

गुरु की कृपा क्या अपने-आप आती है कि कुछ करना पड़ता है ?

अपने-आप क्या आयेगा ? जो होता है वह करने से ही होता है। साधक को चाहिए कि वह गुरु की आज्ञा के अनुसार साधन-भजन, जप-ध्यान, सेवा-सुमिरन आदि करे। गुरु की आज्ञा के अनुसार अपने को ढाले, इससे उसकी पशुता मिटेगी और ईश्वरीय अंश विकसित होगा।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ११६ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया जून २००२ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

श्रद्धा और अश्रद्धा

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

जैसे लोहे और अग्नि के संयोग से तमाम प्रकार के औजार बन जाते हैं, ऐसे ही श्रद्धा और एकाग्रता से मानसिक योग्यताएँ विकसित होती हैं, आध्यात्मिक अनुभूतियाँ होती हैं तथा सभी प्रकार की सफलताएँ और सिद्धियाँ मिलती हैं।

श्रद्धा सही होती है तो सही परिणाम आता है और गलत हो तो गलत परिणाम आता है। किसीको रोग तो थोड़ा-सा होता है लेकिन 'हाय ! मैं रोगी हूँ... मैं बीमार हूँ...' करके गलत श्रद्धा करता है तो उसका रोग बढ़ जाता है। थोड़ी-सी मुसीबत होती है और उस पर श्रद्धा करता है तो उसकी श्रद्धा के प्रभाव से मुसीबत बढ़ जाती है।

अगर रोग तथा मुसीबत के वक्त भी वह सही श्रद्धा करे कि 'रोग शरीर को होता है और मुसीबत मन की कल्पना है, मैं तो परमात्मा का सनातन सपूत हूँ। रोग-बीमारी मुझे छू नहीं सकती है, मैं इनको देखनेवाला, साक्षी-अमर-दृष्टा हूँ ॐ... ॐ... ॐ...' तो रोग का प्रभाव भी कम होता है और रोग जल्दी ठीक भी हो जाता है।

श्रद्धालु, संयमी जितना स्वस्थ जीवन गुजार सकता है, उतना अश्रद्धालु-असंयमी नहीं गुजार सकता। भक्त जितना सुख-दुःख में सम रह सकता है, उतना अभक्त नहीं रह सकता। श्रद्धालु थोड़ा-सा पत्रं-पुष्पं-फलं-तोयं देकर भी जो लाभ पा सकता है वह श्रद्धाहीन व्यक्ति नहीं पा सकता।

जितने व्यक्ति कथा-सत्संग में आये हैं उतने यदि क्लबों में जायें तो सुखी होने के लिए तरह-तरह के सामान-सुविधा की जरूरत होगी। फिर भी देखो तो सत्यानाश ही हाथ लगता है और यहाँ सत्संग में कोई भी ऐहिक सुविधा नहीं है फिर भी कितना लाभ हो रहा है !

क्लबों में जाकर तामसी आहार, डिस्को आदि करके भी लोग तलाक ले लेते हैं और तलाक की नौबत तक आ जानेवाले भी अगर भगवद्कथा में पहुँच जाते हैं तो वे भी भगवान के रास्ते चल पड़ते हैं।

पति-पत्नी में झगड़ा हो गया। पत्नी ने कहा : ''मैं मायके चली जाऊँगी, तब तुम्हें पता चलेगा कि पत्नी का क्या महत्त्व है ? खाना तैयार मिलता है तभी इतना रुआब मार रहे हो। मैं चली जाऊँगी तो फिर कभी वापस नहीं आऊँगी।''

पति : ''कभी नहीं आयेगी तो दूसरा करेगी क्या ?''

पत्नी : ''दूसरा क्यों करूँगी ? मैं तो वृंदावन चली जाऊँगी। मीरा बनूँगी।''

पति : ''जा,जा। तू क्या मीरा बनेगी ? ये मुँह और मसूर की दाल ? मैं ही चला जाऊँगा।''

पत्नी : ''तुम चले जाओगे तो क्या करोगे ? दूसरी शादी करोगे ?''

पति : ''शादी क्यों करूँगा ? शादी करके तो देख लिया। एक मुसीबत कम पड़ी क्या, जो फिर दूसरी मुसीबत में पड़ूँगा ? मैं तो साधु बन जाऊँगा।''

पास से एक महात्मा गुजर रहे थे। महात्मा ने देखा कि दोनों लड़ तो रहे हैं किन्तु पति कह रहा है कि मैं साधु बन जाऊँगा और पत्नी कह रही है कि मैं मीरा बन जाऊँगी। दोनों श्रद्धालु हैं। इनमें श्रद्धा का सद्गुण है तो क्यों न इनका घर स्वर्ग बना दिया जाय ?

महात्मा अनजान होकर आये और बोले :

''नारायण हरि...। किस बात की लड़ाई हो रही है ?''

दोनों चुप हो गये। पति ने कहा :

''महाराज ! इस घर में रोज-रोज खटपट होती है इसलिए लगता है कि संसार में कोई सार नहीं है। मैं अकेला था, तब बड़े मजे में था परन्तु

जबसे शादी हुई है तबसे सब गड़बड़ हो गयी है। मैं तो अब गंगा-किनारे जाकर साधु बन जाऊँगा।''

पत्नी ने कहा : ''महाराज ! मैं भी पहले तो बड़े मजे से रहती थी। जबसे शादी हुई है तबसे सारी खटपट शुरू हो गयी है। मैं तो अब मीरा बन जाऊँगी।''

महात्मा ने कहा : ''देख, तुझमें भी श्रद्धा है और इसमें भी है। कोई वृंदावन जाकर मीरा बने, ऐसा आजकल का जमाना नहीं है। अभी तो घर में ही गिरधर गोपाल की मूर्ति बसा ले। अपने पति में ही गिरधर गोपाल की भावना कर। श्रद्धा से उसके लिए भोजन बना और सेवा कर। जो मीरा को वृंदावन में मिला वही तुझे घर बैठे मिल जायेगा।

और भैया ! तू गंगा किनारे जाकर साधु बनेगा तो किस सेठ का बढ़िया भंडारा होता है और कौन-सा सेठ बढ़िया दान करता है ? इस झमेले में पड़ेगा। इससे अच्छा है कि तू घर में ही संन्यासी हो जा। आसक्तिरहित होकर सत्कर्म कर और उन सत्कर्मों का फल भी भगवान को अर्पित कर दे। इससे तेरे हृदय में ज्ञान की प्यास जगेगी। ज्ञान की प्यास होगी तो तू ज्ञानी गुरु को खोज लेगा और सद्गुरु से सत्संग सुनकर कभी-कभार एकांत अन्तर्मुखता की यात्रा करके परमात्मा को पा लेगा।

दोनों में श्रद्धा का सद्गुण तो है ही। फिर क्यों ऐसा सोचते हो कि मैं वृंदावन चली जाऊँगी या मैं गंगा-किनारे चला जाऊँगा ? तुम तो अपने घर को ही नंदनवन बना सकते हो।''

महात्मा की बात का दोनों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उनका झगड़ा भक्ति में बदल गया और दोनों महात्मा को प्रणाम करते हुए बोले :

''महाराज ! हमने ऐसा कौन-सा पुण्य किया है कि आप जैसे ज्ञानवान महापुरुष के घर बैठे ही दर्शन हो गये ? महाराज ! आइये, विराजिये। कुछ प्रसाद पाकर जाइये।''

अगर किसीमें श्रद्धा है और श्रद्धा सही जगह पर है तो वह देर-सवेर परमात्म-ज्ञान तक पहुँचा ही देती है। श्रद्धापूर्वक किया गया थोड़ा-सा भी सत्कार्य बड़ा फल देता है और अश्रद्धापूर्वक किया गया हवन, तप और दान भी व्यर्थ हो जाता है।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥

'हे अर्जुन ! बिना श्रद्धा के किया हुआ हवन, दिया हुआ दान तथा तपा हुआ तप और जो कुछ भी किया हुआ शुभ कर्म है - वह समस्त 'असत्' कहा जाता है। इसलिए वह न तो इस लोक में लाभदायक है और न मरने के बाद ही।'

(गीता : १७.२८)

तप क्या है ? **पीडोत् भवति सिद्धयः।**

केवल जंगल में जाकर देह को सुखाना ही तप नहीं है वरन् अच्छे काम के लिए कष्ट सहना भी तप है। घर में तो एयरकंडीशनर है लेकिन सत्संग में गये तो कई छोटी-मोटी असुविधाएँ सहनी पड़ती हैं, जमीन पर बैठना पड़ता है, गर्मी सहनी पड़ती है... ये सारे कष्ट सहने पड़ते हैं किन्तु किसके नाते ? ईश्वर के नाते सहन करते हैं तो तप का फल मिल जाता है। उपवास किया, भूख सहन की तो हो गया तप।

ऐसे ही केवल अग्नि में आहुति देना ही यज्ञ नहीं है वरन् भूखे को रोटी देना, प्यासे को पानी पिलाना, हारे को हिम्मत देना, निगुरे को गुरु के पास ले जाना, अभक्त को भक्ति के रास्ते ले चलना भी यज्ञ है।

'क्या करें, माँ के पैर दबाने पड़ते हैं।' इस भाव से माँ की सेवा की तो यह यज्ञ नहीं है। 'माँ के अंदर मेरे भगवान हैं' - इस भाव से माँ की सेवा की तो यह यज्ञ हो जायेगा।

अगर कोई सकाम भाव से दान, तप और यज्ञ करता है तो उसे इहलोक और परलोक में सुख, सफलता और वैभव मिलता है परन्तु कोई अश्रद्धा से कर्म करता है तो उसे न यहाँ फल मिलता है और न ही परलोक में फल मिलता है। किंतु यदि कोई निष्काम भाव से श्रद्धापूर्वक कर्म करता है तो उसका अंतःकरण शुद्ध होता है और परमात्मा को पाने की प्यास बढ़ती है। परमात्म-प्राप्ति की प्यास सत्संग में ले जाती है और वह देर-सवेर परमात्मा

को पाने में भी कामयाबी दिला देती है।

सनत्कुमारजी कहते हैं :

श्रद्धापूर्वाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः ।
श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः ॥

'श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए ही सब धर्म मनोवांछित फल देनेवाले होते हैं। श्रद्धा से सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से ही भगवान श्रीहरि संतुष्ट होते हैं।'

श्रद्धा एक ऐसा सद्गुण है कि वह जिसके हृदय में रहती है वह रसमय हो जाता है। उसकी निराशा-हताशा, पलायनवादिता नष्ट हो जाती है। श्रद्धा अंतःकरण में रस पैदा कर देती है और हारे हुए को हिम्मत दे देती है।

मरीज में भी अगर अपने चिकित्सक के प्रति श्रद्धा होती है कि 'इनके द्वारा मैं ठीक हो जाऊँगा' तभी वह ठीक हो पाता है। अगर मरीज के मन में होता है कि 'मैं ठीक नहीं हो सकता' तब चिकित्सक भी उसे ठीक नहीं कर पाता है। इसी प्रकार जिनका लक्ष्य पैसा लूटना है, आडंबर से रोगों की लंबी-चौड़ी फाईल बनाकर प्रभावित करना है - ऐसे मरीजों के शोषक और आडंबर करनेवाले चिकित्सक उतने सफल नहीं होते, जितने मरीजों का हित चाहनेवाले मरीजों में श्रद्धा संपादन करके उन्हें ठीक करने में सफल होते हैं।

भगवान पर, भगवत्प्राप्त महापुरुषों पर, शास्त्र पर, गुरुमंत्र पर और अपने-आप पर श्रद्धा परम सुख पाने की अमोघ कुंजियाँ हैं।

अगर अपने-आप पर श्रद्धा नहीं है कि 'मैं ठीक नहीं हो सकता... मैं कुछ नहीं कर सकता... मेरा कोई नहीं है...' तो योग्यता होते हुए भी, मददगार होते हुए भी वह कुछ नहीं कर पायेगा। **संशयात्मा विनश्यति...** जिसको संशय बना रहता है समझो, वह गया काम से।

नेपोलियन बोनापार्ट सेना में भर्ती होने के लिए गया। भर्ती करनेवाले अधिकारी ने कहा :

''फलानी जगह पर शत्रुओं की छावनी में जाना है और वहाँ के गुप्त रहस्य लेकर आना है। आधी रात का समय है, बरसात और आँधी भी चल रही है। पगडंडी पानी से भर गयी होगी। क्या तुम यह काम कर सकते हो ?''

नेपोलियन : ''क्यों नहीं ?''

अधिकारी : ''रास्ता नहीं मिला तो ?''

नेपोलियन : ''सर ! आप चिंता न करें। अगर रास्ता नहीं मिला तो मैं अपना रास्ता स्वयं बनाऊँगा। मैं अपना काम करके ही आऊँगा।''

नेपोलियन की अपने-आप पर श्रद्धा थी तो वह ऐहिक जगत में प्रसिद्ध हो गया।

ऐसे ही लिप्टन नामक लड़के को कोई काम-धंधा नहीं मिल रहा था। वह एक होटल में नौकरी खोजने गया।

होटलवाले ने कहा : ''मेरी होटल चलती ही नहीं है, तुझे नौकरी पर क्या रखूँ। फिर भी तू गरीब है। नाश्ता वगैरह कर ले और कोई ग्राहक हो तो यहाँ बुला ला।''

लिप्टन : ''मैं पहले ग्राहक लेकर आता हूँ। वह जहाज आया है।''

होटलवाला : ''पास में भी एक होटल है। सब उसी होटल में चले जायेंगे, यहाँ कोई नहीं आयेगा।''

लिप्टन : ''आप चिंता न करें। मैं ग्राहकों को लेकर आता हूँ, बाद में नास्ता करूँगा।''

लिप्टन गया और कई ग्राहकों को लेकर आ गया। फिर उसी होटल में नौकरी करने लगा और धीरे-धीरे उस होटल का मैनेजर बन गया। बाद में उसने चाय का व्यापार शुरू किया और केवल अपने देश में ही नहीं, वरन् विदेशों में भी उसके नाम की चाय बिकने लगी। भारत में भी 'लिप्टन चाय' का नाम लोग जानते हैं।

कहाँ तो एक छोटा-सा गरीब लड़का, जो नौकरी के लिए भटक रहा था और कहाँ 'लिप्टन चाय कंपनी' का मालिक बन गया !

उसको तो पता भी नहीं होगा कि बापूजी मेरी बात कथा में करेंगे परन्तु उसे अपने-आप पर श्रद्धा थी। इसीलिए वह सफल व्यापारी बन पाया। अगर उसकी भगवान पर श्रद्धा होती और भक्ति के रास्ते पर तत्परतापूर्वक चलता तो भगवान को पाने में भी

सफल हो जाता ।

श्रद्धा के बल पर ही मीरा, शबरी, ध्रुव, प्रह्लाद, धन्ना जाट, नामदेव आदि ने परमेश्वर को पा लिया था । एकलव्य की श्रद्धा दृढ़ थी तो गुरु द्रोण की मूर्ति के आगे धनुर्विद्या सीखते-सीखते इतना निपुण हो गया कि अर्जुन तक को उसकी धनुर्विद्या देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ी ! **जहाँ चाह वहाँ राह...**

श्रद्धा यदि भगवान में होगी तो बुद्धि राग-द्वेष से तपेगी नहीं, जलेगी नहीं । 'चलो, भगवान की मर्जी !' - ऐसा सोचकर श्रद्धालु आदमी शांति पा लेता है किन्तु श्रद्धाहीन व्यक्ति 'उसने ऐसा क्यों कहा ? इसने ऐसा क्यों किया ?' ऐसा करके बात-बात में अशांत हो जाता है ।

किसीने कहा-तो-कहा परन्तु तुम क्यों उस बात को सोचकर पच मरते हो ? 'उसने ऐसा क्यों कहा ? मौका मिलेगा तो बदला लूँगा ।' बदला लेने गये और हो गयी पिटाई तो ले बदला... और अगर बदला लेकर आया, किसीका सिर फोड़कर आया तो फिर खुद ही भागता फिरेगा ।

जहाँ प्रेम होता है, वहाँ मन लगता है । जिस वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति को प्रेम करते हो वहाँ मन बार-बार जाता है । प्रेमास्पद में मन जाता है और श्रद्धेय में बुद्धि जाती है ।

भगवान में, भगवत्प्राप्त महापुरुषों में श्रद्धा करोगे तो बुद्धि वहाँ जायेगी । आपका ज्ञान बढ़ेगा, बुद्धि विकसित होगी । बुद्धि के विकास से भगवान का ज्ञान पाने में मदद मिलेगी । भगवान का पूर्ण ज्ञान होगा तो निर्भय हो जाओगे, सारे दुःखों का अंत हो जायेगा, सारे कष्टों तथा पापों का अंत हो जायेगा और आप परम सुखी सच्चिदानंद-स्वरूप हो जाओगे; जो आप वास्तव में हो ।

कोई व्यक्ति हमारे कथन अथवा निर्देश पर किस रूप में अमल करेगा यह हमारे कहने के ढंग पर निर्भर करता है और सही तरीका वही है जो काम करनेवाले के चित्त में अनुकूल परिणाम उत्पन्न करे । ('मधुर व्यवहार' पुस्तक से)

धन्य कौन ?

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

एक बार ऋषि-मुनियों में आपस में चर्चा चली कि कौन-सा युग श्रेष्ठ है जिसमें थोड़ा-सा पुण्य अधिक फलदायक होता है और कौन सुविधापूर्वक उसका अनुष्ठान कर सकता है ?

किसीने कहा सतयुग ही श्रेष्ठ युग है, किसीने कहा द्वापर तो किसीने कुछ... ऐसे ही किसीने ब्राह्मण को श्रेष्ठ बताया तो किसीने तपस्वियों को तो किसीने ऋषियों को... तब किसीने कहा :

''हम लोग अपने को श्रेष्ठ तो कहते हैं परन्तु वास्तव में श्रेष्ठ कौन है इस बात का पता लगाने के लिए हमें अपने से भी श्रेष्ठ के पास जाना चाहिए।''

फिर आपस में विचार-विमर्श करके सब ऋषि-मुनि वेदव्यासजी के आश्रम में गये । वहाँ पता चला कि वेदव्यासजी नदी में स्नान करने गये हैं, अतः वे सब नदीतट पर पहुँचे ।

वेदव्यासजी के पास यह सामर्थ्य है कि वे आनेवाले के प्रयोजन को सहज ही जान लेते हैं । ऋषि-मुनियों के आने के प्रयोजन को भी वे सहज में ही भाँप गये । जल में डुबकी लगाकर ज्यों ही वेदव्यासजी बाहर निकले त्यों ही बोल पड़े : **शूद्रः साधुः ।** 'शूद्र साधु है ।'

फिर उन्होंने दूसरी डुबकी लगायी और बाहर निकलकर कहा : **कलिः साधुः ।** 'कलियुग प्रशंसनीय है ।'

जब तीसरी डुबकी लगाकर बाहर निकले तब बोले :

योषितः साधुः धन्यास्तास्ताभ्यो धन्यतरोऽस्ति कः ?

'स्त्रियाँ ही साधु हैं, वे ही धन्य हैं, उनसे अधिक धन्य और कौन है ?'

यह सुनकर ऋषि-मुनि संदेह में पड़ गये क्योंकि व्यासजी द्वारा पढ़े गये मंत्र नदी-स्नान-काल में पढ़े जानेवाले मंत्र नहीं थे। नदी से बाहर निकलने पर ऋषि-मुनियों ने उनका अभिवादन करते हुए कहा :

''हम आये तो आपके पास कुछ पूछने के लिए ही हैं लेकिन हम पहले यह जानना चाहते हैं कि 'कलियुग ही धन्य है, शूद्र ही साधु है, स्त्रियाँ ही श्रेष्ठ हैं, वे ही धन्य हैं, उनसे अधिक धन्य और कौन है ?' आपने ऐसा क्यों कहा ? हमें आपके श्रीमुख से यह सुनकर बड़ी जिज्ञासा हो रही है। कृपया हमारी जिज्ञासा का समाधान करें।''

वेदव्यासजी ने कहा :

''सतयुग में १० वर्ष तपस्या करने से जो फल मिलता है वह फल त्रेता में १ वर्ष तपस्या करने से, द्वापर में १ महीना तपस्या करने से और कलियुग में मात्र एक ही दिन तपस्या करने से मिलता है। जो फल सतयुग में ध्यान, त्रेता में यज्ञ और द्वापर में देवार्चन करने से प्राप्त होता है, वही कलियुग में भगवान श्रीकृष्ण का नाम-कीर्तन करने से मिल जाता है। कलियुग में थोड़े-से परिश्रम से ही लोगों को महान धर्म की प्राप्ति हो जाती है। इसलिए कलियुग को श्रेष्ठ कहा है।''

गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी कहा है :

कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥

वेदव्यासजी ने आगे कहा : ''शूद्र श्रेष्ठ है क्योंकि द्विज को पहले ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करते हुए वेदाध्ययन करना पड़ता है और उसके पश्चात् गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने पर स्वधर्माचरण से उपार्जित धन के द्वारा विधिपूर्वक यज्ञ-दानादि करने पड़ते हैं। इसमें भी व्यर्थ वार्तालाप, व्यर्थ भोजनादि उनके पतन के कारण होते हैं, इसलिए उन्हें सदा संयमी रहना आवश्यक होता है। सभी कार्यों में विधि का ध्यान रखना पड़ता है। विधि-विपरीत करने से दोष लगता है। किंतु शूद्र द्वि[illegible] सेवा से ही सदगति प्राप्त कर लेता है इसलिए [illegible] धन्य है।

इसी प्रकार स्त्रियाँ भी धन्य हैं क्योंकि पु[illegible] जब धर्मानुकूल उपायों द्वारा प्राप्त धन से दान [illegible] यज्ञ करते हैं तथा अन्य कष्टसाध्य व्रत-उपव[illegible] आदि करते हैं, तब पुण्यलोक को पाते हैं किंतु स्त्रि[illegible] तो तन-मन-वचन से पति की सेवा करने से [illegible] उनकी हितकारिणी होकर पति के समान शुभ लो[illegible] को अनायास ही प्राप्त कर लेती हैं। इसीलिए [illegible] उन्हें धन्य कहा।''

फिर वेदव्यासजी ने ऋषि-मुनियों से उन[illegible] आने का कारण पूछा तब उन्होंने कहा :

''हम लोग यह पूछने आये थे कि किस युग[illegible] थोड़ा-सा पुण्य भी महान फल दे देता है और क[illegible] उसका सुखपूर्वक अनुष्ठान कर सकता है ? इन[illegible] उचित उत्तर आपने दे ही दिया है, इसलिए [illegible] हमें कुछ नहीं पूछना है।''

व्यासजी के वचनों में अपनी शंकाओं [illegible] समाधान प्राप्त करके ऋषिगण व्यासजी का पूज[illegible] करके अपने-अपने स्थान को लौट गये।

कलियुग का आदमी शिशुपाल हो जायेगा। बालकों के प्रति ममता के कारण इतना तो करेगा कि उन्हें अपने विकास का अवसर ही नहीं मिलेगा। किसीका बेटा घर छोड़कर साधु बनेगा तो हजारों व्यक्ति दर्शन करेंगे, किंतु यदि अपना बेटा साधु बनता होगा तो रोयेंगे कि मेरे बेटे का क्या होगा ? इतनी सारी ममता होगी कि उसे मोहमाया और परिवार में ही बाँधकर रखेंगे और उसका जीवन वहीं खत्म हो जायेगा। अन्त में बेचारा अनाथ होकर मरेगा। वास्तव में लड़के तुम्हारे नहीं हैं, वे तो बहुओं की अमानत हैं, लड़कियाँ जमाइयों की अमानत हैं और तुम्हारा यह शरीर मृत्यु की अमानत है। तुम्हारी आत्मा, परमात्मा की अमानत है। तुम अपने शाश्वत संबंध को जान लो, बस। *(आश्रम की 'शीघ्र ईश्वर प्राप्ति' पुस्तक से)*

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

और हृदय-परिवर्तन हो गया...

चाहे कोई विश्व का चक्रवर्ती सम्राट ही क्यों न हो किन्तु इस जहाँ से तो उसे भी खाली हाथ ही जाना है।

सिकंदर दारा हल्या वया
सोने लंका वारा हल्या वया।
कारुन खजाने जा मालिक
हथे खाली विचारा हल्या वया॥

'सारे विश्व पर राज्य करने का स्वप्न देखनेवाला सिकंदर न रहा, जिसके पास सोने की लंका थी, वह रावण भी न रहा, बहुत बड़े खजाने का मालिक कारुन भी न रहा। ये सब इस जहाँ से खाली हाथ ही चले गये।'

कारुन बादशाह तो इतना जालिम था कि उसने कब्रों तक को नहीं छोड़ा, कर-पर-कर लगाकर प्रजा का खून ही चूस लिया था। आखिर जब देखा कि प्रजा के पास अब एक भी चाँदी का रुपया नहीं बचा है, तब उसने घोषणा कर दी कि 'जिसके पास चाँदी का एक भी रुपया होगा उसके साथ मैं अपनी बेटी की शादी कर दूँगा।'

बादशाह की यह घोषणा सुनकर एक युवक ने अपनी माँ से कहा :

''अम्माजान ! कुछ भी हो एक रुपया दे दे।''

माँ : ''बेटा ! कारुन बादशाह के राज में किसीके पास रुपया ही कहाँ बचा है, जो तुझे एक रुपया दे दूँ ? तू खाना खा ले, मेरे लाल !''

युवक : ''अम्माजान ! मैं खाना तभी खाऊँगा जब तू मुझे एक रुपया दे देगी। मैं शहजादी के बिना नहीं जी सकता।''

हकीकत तो यह है कि परमात्मा के बिना कोई जी नहीं सकता है लेकिन बेवकूफी घुस जाती है कि 'मैं प्रेमिका के बिना नहीं जी सकता... मैं शराब के बिना नहीं जी सकता...'

एक दिन, दो दिन, तीन दिन बेटा भूखा रहा... माँ ने छाती पीटी, सिर कूटा किंतु लड़का टस-से-मस न हुआ। अब माँ का हृदय हाथ में कैसे रहता ? माँ ने अल्लाहताला से प्रार्थना की। प्रार्थना करते-करते माँ को एक युक्ति सूझी। उसने बेटे से कहा :

''मेरे लाल ! तू तीन दिन से भूखा मर रहा है। हठ पकड़कर बैठ गया है। कारुन ने किसीके पास एक रुपया तक नहीं छोड़ा है। फिर भी मुझे याद आया कि तेरे अब्बाजान को दफनाते समय उनके मुँह में एक रुपया रखा था। अब जब तू अपनी जान कुर्बान करने को ही तैयार हो गया है तो जा, अपने अब्बाजान की कब्र खोदकर उनके मुँह से एक रुपया निकाल ले और कारुन बादशाह को दे दे।''

कारुन ने अपने अब्बाजान की कब्र खोदकर एक रुपया लानेवाले लड़के को अपनी कन्या तो नहीं दी बल्कि सारे कब्र खुदवाये और मुर्दों के मुँह में पड़े हुए रुपये निकलवा लिये। कब्रों में पड़े हुए मुर्दे बेचारे क्या बोलें ? यदि कोई हिन्दू राजा ऐसा करता तो उसे न मुसलमान बादशाह ही बख्सते न हिन्दू राजा ही क्षमा करते।

कैसा लोभी और जालिम रहा होगा कारुन !

गुरु नानक को इस बात का पता चला। उन्होंने कारुन की इस बेवकूफी को दूर करने का मन-ही-मन निश्चय कर लिया और विचरण करते-करते कारुन के महल के पास अपना डेरा डाला।

लोग नानकजी के पास मत्था टेकने आते। पुण्यात्मा-धर्मात्मा, समझदार लोग उनके अमृतवचन सुनकर शांति पाते। धीरे-धीरे उनका यश चतुर्दिक् प्रसरित होने लगा। कारुन को भी हुआ कि 'चलो, किसी पीर-फकीर की दुआ मिले तो अपना खजाना और बढ़े।' वह भी मत्था टेकने आया।

आत्मारामी संत-फकीर तो सभीके होते हैं। जो लोग बिल्कुल नासमझ होते हैं वे ही बोलते हैं कि 'ये फलाने के महाराज हैं।' वरना संत तो सभी के होते हैं। जैसे गंगा का जल सबके लिए है, वायु सबके लिए है, सूर्य का प्रकाश सबके लिए समान है, ऐसे ही संत भी सबके लिए समान ही होते हैं।

कारुन बादशाह नानकजी के पास आया। नानकजी को मत्था टेका। नानकजी ने उसको एक टका दे दिया और कहा : ''बादशाह सलामत के लिए और कोई सेवा नहीं है केवल इस एक टके को सँभालकर रखना। (पहले के जमाने में एक रुपये में १६ आने होते थे। टका मतलब आधा आना - आज के करीब ३ पैसे।) जब मुझे जरूरत पड़ेगी तब तुमसे ले लूँगा और हाँ, यहाँ तो मुझे इसकी कोई जरूरत नहीं पड़ेगी किन्तु मरने के बाद जब तुम परलोक में मिलोगे तब दे देना। मेरी यह अमानत सँभालकर रखना।''

कारुन : ''महाराज ! मरने के बाद आपका टका मैं कैसे ले जाऊँगा ?''

नानकजी : ''क्यों ? इसमें क्या तकलीफ है ? तुम इतने खजानों को तो साथ ले ही जाओगे। प्रजा का खून चूसकर और ढेर सारी कब्रें खुदवाकर तुमने जो खजाना एकत्रित किया है उसे तो तुम ले ही जाओगे, उसके साथ मेरा एक टका उठाने में तुम्हें क्या कष्ट होगा ? भैया ! पूरा ऊँट निकल जाय तो उसकी पूँछ क्या डूब सकती है ?''

कारुन : ''महाराज ! साथ में तो कुछ नहीं जायेगा। सब यहीं धरा रह जायेगा।''

नानकजी : ''इतना तो तुम भी समझते हो कि साथ में कुछ भी नहीं जायेगा। फिर इतने समझदार होकर कब्रें तक खुदवाकर खजाने में रुपये क्यों जमा किये ?''

नानकजी की कृपा और शुभ संकल्प के कारण कारुन का हृदय बदल गया ! उसने खजाने के द्वार खोले और प्रजा के हित में संपत्ति को लगा दिया।

जिसने कब्र तक से पैसे निकलवा लिये ऐसे कारुन जैसे का भी हृदय परिवर्तित कर दिया नानकजी ने !

संतमिलन को जाइये...

एक सेठ अपने सचिव, ख़ज़ानची आदि करीब १५-२० लोगों के साथ महात्मा के पास गया। सेठ ने प्रणाम करते हुए महात्मा के चरणों में दक्षिणा रखी और कहा : ''बाबाजी ! हम जानते हैं कि यह शरीर एक दिन मिट्टी में मिल जानेवाला है फिर भी खाने-पीने की गंदी आदत नहीं छूटती। हम जानते हैं कि एक दिन रुपयों को छोड़कर जाना है फिर भी लालच पीछा नहीं छोड़ता।

बाबाजी ! अभी तक हमने बहुत खाया-पीया-भोगा, फिर भी खाने-पीने और भोगने की गंदी आदत नहीं छूटती है। आँखों को कई सुंदर रूप दिखाये, नाक को कई इत्र सुँघाये, जिह्वा को कई स्वाद चखाये, कान को कई राग-रागिनियाँ सुनायीं, त्वचा को कई स्पर्श करवाये... अंत में देखो तो कुछ नहीं। आखिर में यह तन तो जल जायेगा किन्तु मन भटकता रहेगा।

बाबाजी ! हमारी हालत तो ऐसी है कि हम धर्म को तो जानते हैं परन्तु धर्म का प्रसाद नहीं पा सकते। अधर्म को तो जानते हैं फिर भी उससे बच नहीं सकते। बाबाजी ! कुछ उपाय बताइये।''

महात्मा ने सेठ के प्रश्न का उत्तर वचनों से न देकर प्रयोग द्वारा देना चाहा तथा अपने शिष्यों को संकेत किया कि कीर्तन शुरू करो।

शिष्यों ने कीर्तन शुरू कर दिया। सब झूम उठे। सेठ के सारे साथी भी झूम उठे। सेठ बार-बार उनकी ओर देखने लगा और मन में विचारने लगा कि 'कैसे बेवकूफ लोग हैं ! मेरा बड़ा गहरा सवाल था और बाबाजी के चेले कीर्तन करके शोरगुल मचा रहे हैं !'

कीर्तन तो चलता रहा, महात्मा की संप्रेषण शक्ति के प्रभाव से कुछ लोगों की सुषुप्त शक्ति जाग्रत हो उठी। कोई रोने लगा, कोई हँसने लगा, कोई नृत्य करने लगा... सेठ तो आश्चर्यचकित होकर देखता ही रहा।

आखिर महात्मा ने कीर्तन बंद करवाया। सारा वातावरण शांत हो गया। सेठ ने पुनः कहा :

''बाबाजी ! मेरे सवाल का जवाब नहीं मिल

पाया है।''

महात्मा : ''तूने पूछा था कि मन धर्म में क्यों नहीं लगता है ?

जब तक मन को अंतरात्मा की चेतना का स्वाद नहीं आयेगा, तब तक वह विकारों से नहीं भागेगा। स्वाद लाना है तो भगवन्नाम जपते-जपते संत की रहमत झेलने की योग्यता लाओ। तभी मन को स्वाद आयेगा और मन परमात्मा की तरफ जायेगा।

जब मन को परमात्मरस का स्वाद आने लगेगा, तब संसार का विकारी रस अपने-आप छूट जायेगा। जो खीर खाकर तृप्त है क्या वह नाली के पानी से संतुष्ट हो सकता है ? ऐसे ही जिसको आत्मा का सुख आने लगे उसको विकारी सुखों से क्या लेना है ?''

अब सेठ को लगा कि मैं गलत सोच रहा था कि कीर्तन करके क्या शोर मचा रहे हैं ? कीर्तन के द्वारा सब महात्मा की संप्रेषण शक्ति का कृपा-प्रसाद पा रहे थे। सेठ ने विनम्र भाव से कहा :

''महाराज ! मुझ पर भी आपकी कृपा हो जाय। मुझे भी आपसे दीक्षा मिल जाय।''

महात्मा : ''अभी तो तुम सेठ होकर आये हो। जब तुम साधक बनकर आओगे तब काम हो जायेगा।''

संत मिलन को जाइये तजि मोह-माया अभिमान।
ज्यों-ज्यों पग आगे धरे कोटि यज्ञ समान॥

*

जैसा खाओ अन्न...

बासमती चावल बेचनेवाले एक सेठ की स्टेशन मास्टर से साँठगाँठ हो गयी। सेठ को आधी कीमत पर बासमती चावल मिलने लगा। सेठ को हुआ कि इतना पाप हो रहा है तो कुछ धर्म-कर्म भी करना चाहिए।

एक दिन उसने बासमती चावल की खीर बनवायी और किसी साधु बाबा को आमंत्रित कर भोजन-प्रसाद लेने के लिए प्रार्थना की।

साधु बाबा ने बासमती चावल की खीर खायी। दोपहर का समय था। सेठ ने कहा :

''महाराज ! अभी आराम कीजिये। थोड़ी धूप कम हो जाय फिर पधारियेगा।''

साधु बाबा ने बात स्वीकार कर ली। सेठ ने १००-१०० रुपयेवाली १० लाख जितनी रकम की गड्डियाँ उसी कमरे में चादर से ढँककर रख दी।

साधु बाबा आराम करने लगे। खीर थोडी हज़म हुई। चोरी के चावल थे। साधु बाबा के मन में हुआ कि इतनी सारी गड्डियाँ पड़ी हैं, एक-दो उठाकर झोले में रख लूँ तो किसको पता चलेगा ? साधु बाबा ने एक गड्डी उठाकर रख ली। शाम हुई तो सेठ को आशीर्वाद देकर चल पड़े।

सेठ दूसरे दिन रुपये गिनने बैठा तो १ गड्डी (दस हजार रुपये) कम निकली। सेठ ने सोचा कि महात्मा तो भगवत्स्वरूप थे, वे क्यों लेंगे ? नौकरों की धुलाई-पिटाई चालू हो गयी। ऐसा करते-करते दोपहर हो गयी।

इतने में साधु बाबा आ पहुँचे तथा अपने झोले में से गड्डी निकालकर सेठ को देते हुए बोले :

''नौकरों को मत पीटना, गड्डी मैं ले गया था।''

सेठ ने कहा : ''महाराज ! आप क्यों लेंगे ? जब यहाँ नौकरों से पूछताछ शुरू हुई तब कोई भय के मारे आपको दे गया होगा और आप नौकर को बचाने के उद्देश्य से ही वापस करने आये हैं क्योंकि साधु तो दयालु होते हैं।''

साधु : ''यह दयालुता नहीं है। मैं सचमुच में तुम्हारी गड्डी चुराकर ले गया था। सेठ ! तुम सच बताओ कि तुमने कल खीर किसकी और किसलिए बनायी थी ?''

सेठ ने सारी बात बता दी कि स्टेशन मास्टर से चोरी के चावल खरीदता हूँ, उसी चावल की खीर थी।

साधु बाबा : ''चोरी के चावल की खीर थी इसलिए उसने मेरे मन में भी चोरी का भाव उत्पन्न कर दिया। सुबह जब पेट खाली हुआ, तेरी खीर का सफाया हो गया तब मेरी बुद्धि शुद्ध हुई कि 'हे राम... यह क्या हो गया ? मेरे कारण बेचारे नौकरों पर न जाने क्या बीत रही होगी। इसलिए तेरे पैसे लौटाने आ गया।''

इसीलिए कहते हैं कि :

जैसा खाओ अन्न वैसा होवे मन।
जैसा पीओ पानी वैसी होवे वाणी॥

नारी के कोई मर्द नहीं रहता तो नारी का क्या करें ? जब नारी सनातन धर्म जैसी ही रहती है तो हमको भी वैसे ही रहने दो। हम हिन्दू ही भले हैं।

एक तरफ पूरी मुसलमानों की जमात और दूसरी तरफ केवल १० वर्षीय कबीरजी अकेले... फिर भी उनका हौसला इतना बुलंद था कि कोई कुछ न कह सका।

हिन्दू धर्म की महानता की कैसी अद्‌भुत सूझबूझ थी १० वर्ष के बालक में !

*

गुरु हरगोविंद सिंह का बाल्यकाल

सिक्खों के छट्ठे गुरु हरगोविंद सिंह का जन्म सन् १५७५ में गुरु अर्जुनदेव के यहाँ माता गंगा की कोख से हुआ था। ये ११ वर्ष की अल्पायु में ही गुरुगद्दी पर आसीन हुए थे। इनमें योद्धा तथा संत - ये दोनों ही विशेषताएँ विद्यमान थीं।

गुरु रामदास ने अपने ज्येष्ठ पुत्र पिरथीचंद को गुरुगद्दी न देकर अपने सबसे छोटे पुत्र अर्जुनदेव को गुरुगद्दी सौंपी थी। अतः वह अर्जुनदेव को सदा अपना शत्रु समझता रहा। उसने गुरु अर्जुनदेव को गुरुगद्दी से वंचित करने के लिए कई प्रयास किये, उनके विरुद्ध कई मुकदमे दायर किये किंतु वह असफल ही रहा।

संतों को न किसीसे राग होता है न द्वेष। उसके अनेक षड्‌यंत्रों को जानने के बावजूद भी अर्जुनदेव ने उसके प्रति उदारभाव ही अपनाये रखा।

'हरगोविंद का जन्म हुआ है' - इस समाचार को सुनकर पिरथी के कलेजे पर साँप लोटने लगा क्योंकि काफी समय से अर्जुनदेव के यहाँ कोई संतति न होने के कारण पिरथी को ऐसा था कि उसका पुत्र मेहरबान सिंह ही गुरुगद्दी का अधिकारी होगा। लेकिन हरगोविंद के जन्म ने उसकी इस आशा पर पानी फेर दिया और पिरथीचंद ईर्ष्या की आग में तपने लगा। यहाँ तक कि उसने हरगोविंद को मारने के कई प्रयास किये।

एक बार उसने हरगोविंद के पास अपनी परिचारिका को दुग्धपान कराने के लिए भेजा। परिचारिका ने उसकी आज्ञा के अनुसार अपने स्तनों पर विष का लेपन कर लिया था परन्तु जिसकी रक्षा स्वयं परमेश्वर करते हों उसका बाल तक बाँका कैसे हो सकता है ? इसके पूर्व कि वह अपने स्तनों को शिशु की ओर ले जाती स्वयं मूर्छित होकर गिर पड़ी ! मूर्छा हटने पर उसने अपने आने का दुष्प्रयोजन बता दिया।

दूसरी बार पिरथीचंद ने एक सँपेरे को प्रचुर धन देकर भेजा ताकि वह सर्पदंश के द्वारा हरगोविंद की हत्या कर दे किन्तु उसका यह षड्‌यंत्र भी विफल रहा।

इसके बाद पिरथी ने एक ब्राह्मण को बहुत-सा धन देकर शिशु के दूध में विष मिलाने के लिए भेजा। किंतु गुरु अर्जुनदेव को संदेह हो गया। उन्होंने वह दूध एक कुत्ते को पिला दिया जिससे कुत्ते की मृत्यु हो गयी !

कैसी होती है ईर्ष्या की अग्नि जो अपने भतीजे तक को विष देने से बाज नहीं आती ? लेकिन परमेश्वर अपने प्यारों का ध्यान रखते ही हैं।

बाल्यकाल से ही अनेक संकटपूर्ण परिस्थितियों का सामना करते हुए, गुरु अर्जुनदेव के शहीद होने पर हरगोविंदजी ११ वर्ष की छोटी-सी उम्र में ही गुरुगद्दी पर आसीन हुए तथा ३७ वर्ष तक सनातन धर्म और संस्कृति की रक्षा में संलग्न रहे।

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

अंग्रेजी पढ़ाई का फल !

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

अभी कुछ दिन पहले की बात है :

इलाहाबाद में रहकर एक किसान का बेटा वकालत की पढ़ाई कर रहा था। बेटे को बाहर खर्च न करना पड़े इसलिए उसके पिता (किसान) घी, गुड़, दाल-चावल आदि सीधा-सामान घर से दे जाते थे।

एक बार बेटा अपने दोस्तों के साथ कुर्सी पर बैठकर चाय-ब्रेड का नाश्ता कर रहा था। इतने में वह किसान पहुँचा। धोती फटी हुई, चमड़े के जूते, हाथ में डंडा, कमर झुकी हुई... आकर उसने गठरी उतारी। बेटे को हुआ : 'बूढ़ा आ गया है, कहीं मेरी इज्जत न चली जाय !' इतने में उसके मित्रों ने पूछा :

''यह बूढ़ा कौन है ?''

लड़का : ''यह तो मेरा नौकर है।'' (He is my servant.)

लड़के ने धीरे-से कहा किन्तु पिता ने सुन लिया। वृद्ध किसान ने कहा :

''भाई ! मैं नौकर तो जरूर हूँ लेकिन इसका नौकर नहीं हूँ, इसकी माँ का नौकर हूँ। इसीलिए ये सामान उठाकर लाया हूँ।''

यह अंग्रेजी पढ़ाई का फल है कि अपने पिता को मित्र के सामने पिता कहने में शर्म आ रही है ! संकोच हो रहा है ! ऐसी अंग्रेजी पढ़ाई और आडंबर की ऐसी-की-तैसी कर दो जो तुम्हें तुम्हारी संस्कृति से दूर ले जाय !

भारत को आजाद हुए ५५ साल हो गये फिर भी अंग्रेजों की गुलामी दिल-दिमाग से दूर न हुई !

पिता तो आखिर पिता ही होता है चाहे किसी भी हालत में हो। प्रह्लाद को कष्ट देनेवाले दैत्य हिरण्यकशिपु को भी प्रह्लाद कहता है : 'पिताश्री !' और तुम्हारे लिए तनतोड़ मेहनत करके, तुम्हारा पालन-पोषण करनेवाले पिता को नौकर बताने में तुम्हें शर्म नहीं आती ?

भारतीय संस्कृति में तो माता-पिता को देव कहा गया है। **मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव...** उसी दिव्य संस्कृति में जन्म लेकर माता-पिता का आदर करना तो दूर रहा... उनका तिरस्कार करना, वह भी विदेशी भोगवादी संस्कृति के चंगुल में फँसकर... यह कहाँ तक उचित है ?

भगवान गणेश माता-पिता की परिक्रमा करके ही प्रथम पूज्य हो गये ! आज भी प्रत्येक धार्मिक विधि-विधान में श्रीगणेशजी का प्रथम पूजन होता है। श्रवण कुमार ने माता-पिता की सेवा में अपने कष्टों की जरा-भी परवाह न की और अंत में सेवा करते हुए प्राण त्याग दिये... देवव्रत भीष्म ने पिता की खुशी के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत पाला और विश्वप्रसिद्ध हो गये... महापुरुषों की पावन भूमि भारत में तुम्हारा भी जन्म हुआ है। स्वयं के सुखों का बलिदान देकर पुत्र हेतु अगणित कष्ट उठानेवाले माता-पिता पूजने योग्य हैं। उनकी सेवा करके अपने भाग्य को बनाओ। किन्हीं संत ने ठीक ही कहा है :

जिन मात-पिता की सेवा की
तिन तीरथ जाप कियो न कियो...

'जो माता-पिता की सेवा करते हैं उनके लिए किसी तीर्थयात्रा की आवश्यकता नहीं है।'

माता-पिता व गुरुजनों की सेवा करनेवाला और उनका आदर करनेवाला स्वयं चिरआदरणीय बन जाता है। लेकिन जो माता-पिता, मित्र अथवा गुरु ईश्वर के रास्ते जाने से रोकते हैं उनकी सेवा करना और बात मानना कोई जरूरी नहीं।

✲

जहाँ डाल-डाल पर सोने की चिड़िया...

भारतीय संस्कृति ही एकमात्र ऐसी संस्कृति है जो किसी दूसरे राष्ट्र या संस्कृति पर हमला किये बिना, उन्हें लूटे बिना फूली-फली तथा समृद्धशाली बनी। **वसुधैव कुटुंबकम्** की भावना जो हजारों वर्षों से ऋषि-मुनियों ने स्थापित की, परहित परायणता के जो संस्कार दिये उसीका यह परिणाम है कि आज भी अन्य राष्ट्रों में जहाँ-जहाँ हिन्दू बसे हैं उस देश के मूल निवासियों के साथ घुल-मिलकर रह रहे हैं जबकि अन्य राष्ट्र या जाति के लोगों ने तो हिन्दुस्तान को वर्षों से लूटा, अत्याचार किया, धर्मांतरण करवाकर उसकी संस्कृति को ही जड़ से नष्ट करने का प्रयास किया।

विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के पिछले दो शताब्दियों की उत्पादन-क्षमता की तालिका प्रस्तुत है। यह सूची 'क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन एन्ड द रिमेकिंग ऑफ वर्ल्ड ऑर्डर' से ली गयी है, जिसके लेखक हैं सेम्यूल हंटिंगटन जो हार्वर्ड एकेडेमी के अन्तर्गत अंतर्राष्ट्रीय निरीक्षण केन्द्र के अध्यक्ष हैं। राष्ट्र की संपत्ति की सूचक उसकी उत्पादन-क्षमता होती है।

तुलनात्मक दृष्टि से भारत और पश्चिमी देशों के बीच के अन्तर को स्पष्ट महसूस किया जा सकता है कि भारत की संपत्ति को ही लूट-लूटकर पश्चिमी देशों में धन भेजा गया था। अंग्रेजों ने भारतीयों के भोलेपन का पूरा फायदा उठाते हुए 'फूट डालो और राज्य करो' की कूटनीति अपनायी। एक धर्म को दूसरे धर्म से, भाई को भाई से, पड़ोसी को पड़ोसी से लड़ने के लिए प्रेरित किया तथा अपने शासन की जड़ें मजबूत करने हेतु साम, दाम, दंड, भेद - चारों नीतियाँ अपनाकर भारत की नींव को खोखला कर दिया।

चोरी, लूटमार, कपट, कत्लेआम, अत्याचार की दहशत फैलती गयी और भारत गुलामी की जंजीरों में जकड़ता चला गया। भारतवासियों के लिए सिवाय जुल्म और अत्याचार सहने के कोई रास्ता न बचा।

सन् १७५० में सम्पूर्ण विश्व की सम्पत्ति में भारत का हिस्सा २४.५% था जो कि सारे विश्व के उत्पादन का एक चौथाई हिस्सा था, आज की तारीख में यह अमेरिका के हिस्से के बराबर है।

आज अमेरिका जितना समृद्धशाली, वैभवशाली है (विश्व में कुल उत्पादन-क्षमता की दृष्टि से) उतना ही भारत आज से ढाई सौ वर्ष पूर्व था। १७५० के वर्ष में भारत की संपत्ति २४.५% थी, जो तत्कालीन सभी पश्चिमी देशों और रूस (सोवियत संघ) इन दोनों की कुल संपत्ति से भी ज्यादा थी (१८.२%+५% =२३.२%)

१७५० से १९८० तक विभिन्न राष्ट्रों की उत्पादन-क्षमता की तालिका

राष्ट्र	१७५०	१८००	१८६०	१९००	१९२८	१९५३	१९८०
पश्चिमी देश	१८.२%	२३.३%	५३.७%	७७.४%	८४.२%	७४.६%	५७.८%
चीन	३२.८%	३३.३%	१९.७%	६.२%	३.४%	२.३%	५.०%
जापान	३.८%	३.५%	२.६%	२.४%	३.३%	२.९%	९.१%
भारत	२४.५%	१९.७%	८.६%	१.७%	१.९%	१.७%	२.३%
सोवियत संघ रूस	५.०%	५.६%	७.०%	८.८%	५.३%	१६.०%	२१.१%
ब्राजील/मैक्सिको	---	---	०.८%	०.७%	०.८%	०.९%	२.२%
अन्य	१५.७%	१४.६%	७.६%	२.८%	१.१%	१.६%	२.५%

यहाँ भी एक बात ध्यान देने योग्य है कि ग्रीक, मंगोल, अरबियों और मुगलों द्वारा लगातार सात सौ वर्षों से बुरी तरह से लूटे जाने के बाद भी सन् १७५० में भारत इतना वैभवशाली था कि उसकी संपत्ति का हिस्सा सारे विश्व की संपत्ति का एक चौथाई था। सन् ९९८ में मुहम्मद गजनवी ने चढ़ाई की और सत्रह बार से भी अधिक भारत और उसके पवित्रतम मंदिरों को लूटा और टनों-के-टन सोना, हीरे-जवाहरात लूटकर ले गया। अभी भी बड़े-बड़े अधिकारी, राजनेता, उद्योगपति व विदेशी कंपनियाँ यही कर रही हैं, केवल उनके तरीके अलग-अलग हैं।

उपरोक्त तालिका का प्रारंभिक वर्ष १७५० को चुना गया है, जिसके २५० वर्ष पूर्व वास्को-डी-गामा कालीकट के तट पर आ पहुँचा था। पुर्तगाली, फ्रैंच और अंग्रेजों ने गत इन २५० वर्षों में अपनी जड़ें भारत में फैलायी और आपस में इस बात के लिए लड़ते रहे कि उनमें से भारत की संपत्ति को लूटने का अधिकारी कौन है!

और मात्र १५० वर्ष के अंतराल में, सन् १७५० से सन् १९०० तक भारत की संपत्ति २४.५% से घटकर मात्र १.७% ही रह गयी, जबकि पश्चिमी देशों की संपत्ति १८.२% से उछलकर ७७.४% पर पहुँच गयी। यह कहने की आवश्यकता ही नहीं है कि भारत को नोंच-नोंचकर उसकी संपत्ति को लूटा गया है क्योंकि सभी लोग इतिहास से तो अवगत ही हैं।

भारत की गणना अब समृद्धशाली, वैभवशाली और अमीर देशों में नहीं रही बल्कि गरीब और दीन-हीन देशों में होने लगी है, जबकि पश्चिमी देश आज विश्व के समक्ष एक महासत्ता के रूप में खड़े हैं।

एक प्रसिद्ध इतिहासकार और दार्शनिक वील ड्यूरेन्ट अपनी पुस्तक 'द स्टोरी ऑफ सिविलाइजेशन, अवर ओरियन्टल हेरिटेज' में लिखते हैं : 'भारत पर मुगलों के हमले सबसे ज्यादा खतरनाक और खून से रँगे हुए थे। यह निचोड़ बहुत ही खेदजनक है। संस्कृति का जतन एक अत्यंत जोखम से भरा कार्य है, जिसका ढाँचा बहुत ही नाजुक है। नीतिमत्ता और आजादी, संस्कृति और शांति को किसी भी समय इन आक्रमणकारियों द्वारा उलट-पुलट किया जा सकता है, चाहे वे बाहरी आक्रमण हों, चाहे देश के भीतर ही पनप रहे आतंकवाद के रूप में हों।'

अंग्रेजों ने २०० वर्षों में भारत को जितना नोंचा उतना मुगलों द्वारा ७५० वर्षों के खून-खराबे से भी नहीं हुआ। मुगल सेना ने भी भारतीयों को लूटा मगर अकबर के शासनकाल (१५६० से १६०५) से वे भारत में ही बसने लगे क्योंकि उन्हें 'खायबर की खाड़ी' से निकाला जा चुका था। इसलिए भारत की संपत्ति (जो मुगलों ने लूटी) यहीं-की-यहीं रही, पर अंग्रेजों ने तो जहाज भर-भरकर सम्पत्ति अपने देश में भेजी थी। वास्को-डी-गामा ने भी दो बार जहाज भर-भरकर सम्पत्ति अपने देश में भेजी।

यह कहना सरासर गलत है कि हिन्दुओं के आपस में लड़ने के कारण भारत का पतन हुआ। इतिहास पर दृष्टिपात करें तो १७५० से पहले मुगल और अंग्रेज (यूरोप तथा मध्यपूर्वी देश) दोनों आपस में ही लड़ रहे थे। शांतिपूर्ण वातावरण में मनुष्यों हेतु उपयोगी साधन-सामग्रियों के उत्पादन में भारतीय जुटे थे, जबकि संपूर्ण पश्चिम और मध्यपूर्व का क्षेत्र एक रणभूमि में परिवर्तित हो चुका था। वे युद्ध की साधन-सामग्रियाँ जुटाने में और उनके विकास में जुटे हुए थे क्योंकि खिस्ती धर्म और इस्लाम धर्म का मुख्य सार ही लड़ाई है। कुरान और बाईबिल में ऐसे-ऐसे तथ्य मौजूद हैं जो इस बात के साक्षी हैं।

वील ड्यूरेन्ट अपनी पुस्तक में एक रूपक प्रस्तुत करते हैं जो यह दर्शाता है कि भारतीय अन्य धर्मों के सम्बन्ध में कितने भ्रमित हैं।

''सन् १४९८ में जब लीस्बन से ११ माह की मुसाफिरी के बाद वास्को-डी-गामा का जहाज कालीकट पहुँचा तब मालाबार के राजा ने उनका सत्कार किया और पुर्तगाली राजा को सम्मान-पत्र में लिखकर भेजा : 'यह अत्यंत आनंद की बात है कि आपके राज्य के 'सज्जन पुरुष' वास्को-डी-गामा हमारे राज्य में पधारे। हमारे राज्य में भरपूर मात्रा में लौंग, कालीमिर्च,

दालचीनी और हीरे-जवाहरात हैं ।' राजा की तो व्यापार बढ़ाने की दृष्टि थी पर पुर्तगाली सम्राट ने तो भारत पर पुर्तगाल का अधिकार है, ऐसा प्रत्युत्तर लिखकर भेजा । मालाबार के महाराजा इतने मूर्ख थे कि उनका उद्देश्य तब तक नहीं समझ पाये, जब तक पुर्तगाली सम्राट ने भारत में खिस्ती धर्म फैलाने और युद्ध करने के लिए सेना की एक टुकड़ी न भेज दी ।

एक ओर वास्को-डी-गामा ने भारतभूमि पर कदम रखा तो दूसरी ओर जो पोप के उपदेशों को नहीं मानते थे, ऐसे यहूदियों और मुस्लिमों को जिन्दा जलाने का पाशवी कृत्य पुर्तगाली और स्पेनिश कर रहे थे ।

मालाबार के महाराजा तो इन सभी बातों से अवगत नहीं थे, इसीलिए वास्को-डी-गामा का खूब सत्कार किया और 'सज्जन पुरुष' कहकर संबोधित किया, पर ऐसे वीभत्स प्रत्युत्तर पाकर भी महाराजा ना जगे ।''

हिन्दू संस्कृति के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार **'अतिथि देवो भव'** की भावना से प्रेरित होकर ही मालाबार के महाराजा ने उसका सत्कार किया था । उनकी सौम्यता और नम्रता का फायदा उठाया पुर्तगाली राजा ने । उससे भी ज्यादा श्रेय हिन्दुओं की अन्धी मान्यता को जाता है, जिसे 'तीन बंदर' के रूपक से दर्शाया जाता है, 'बुरा ना देखो, बुरा ना बोलो, बुरा ना सुनो' जबकि तुम्हारे चारों ओर बुराई अपना नंगा नाच प्रदर्शित कर रही हो । अपने पवित्र भाव और विचारों को सुरक्षित रखना और सब कुछ देखते हुए भी आँखें बंद करना कि ईश्वर हमें हमारे अच्छे कर्मों का बदला जरूर देंगे । बिना सोचे, बिना समझे ही गाये जा रहे हैं कि 'ईश्वर-
...ो देखो कि अन्य धर्म-
... मानते हैं क्या ? इस
... अनजान हैं कि खिस्ती
...स्त को मुहम्मद या राम
...खिस्त या राम के साथ
... माना गया है । वे तो
... (चाहे खिस्त हो या

जा...
भारत ' ... पुरुष' | हमारे
सोवियत सं...
ब्राजील/मैक्सि... कालीमिर्च,
अन्य
२३

मुहम्मद) को मानते हैं, अन्य सारे जन काफिर पापी हैं और धरती पर रहने के काबिल ही नहीं

अब समय आ गया है ! सोये-सोये काम चलेगा ! भारतवासियों को अब जागना पड़ेगा, अ लापरवाह रहे तो फिर से गुलामी की जंजीरों जकड़े जाने की संभावना बढ़ रही है ।

पूर्व के गुलामी के संस्कारों ने हमारा प मनोबल ही निचोड़ लिया है । इसलिए संतों शरण में जाकर आत्मबल, मनोबल बढ़ाने युक्तियाँ सीख लो । आज भी परहितदर्शी स मौजूद हैं, जो न केवल भारतवासियों का, अपि संपूर्ण मानव-समाज का व पूरे विश्व के दीपस्त बनकर तूफान में फँसी किश्ती को शांति के किन पर पहुँचाने में सक्षम हैं । पूर्वकाल में भी बड़े-ब राजा-महाराजा संतों से मार्गदर्शन लेकर सुचा ढंग से अपना कार्यभार सँभालते और प्रजा का अप बालक की तरह पोषण किया करते थे तथा भोग मोक्ष दोनों पा लेते थे ।

मित्र और शत्रु

जहाँ मित्र होते हैं, वहीं शत्रु बनते हैं । जिसकी किसीसे मित्रता नहीं, उसका कोई शत्रु भी नहीं है । मित्र में से ही तो शत्रु का सर्जन होता है और शत्रु ही कभी मित्र बन जाता है ।

जिससे प्रेम है, उससे प्रेम के साथ थोड़ी-बहुत फरियाद भी होती है लेकिन हम फरियाद व्यक्त नहीं करते हैं । फरियाद दबी रह जाती है और प्रेम व्यक्त होता रहता है । जब फरियाद जोर पकड़ती है, तब मित्रता शत्रुता का रूप ले लेती है ।

अतः जिससे तुम्हारा प्रेम है उससे ऐसी बात कभी नहीं कहना जो तुम शत्रु से नहीं कहना चाहते हो क्योंकि तुम्हारा मित्र कभी-न-कभी तुम्हारा शत्रु बन सकता है और फिर वह तुम्हारी बात का दुरुपयोग कर सकता है तथा शत्रु से ऐसा व्यवहार कभी न करना जो तुम मित्र के साथ नहीं करना चाहते हो क्योंकि शत्रु कभी मित्र होगा तब किया हुआ व्यवहार तुम्हें शरमिंदा कर देगा । *- संत श्री आसारामजी बापू*

आज के युग में मानव जैसे-जैसे ज्यादा-से-ज्यादा कृत्रिम साधनों के प्रति अंधी दौड़ लगा रहा है, उतना ही ज्यादा अशांत और खिन्न होता जा रहा है। पेड़-पौधे, पशु-पक्षी तथा मानवीय जीवन सभी आपस में एक दूसरे से किसी-न-किसी तरह से जुड़े हैं। यह प्रकृति की व्यवस्था है। कृत्रिम साधनों से प्रकृति की व्यवस्था में हस्तक्षेप करने से दुःखद परिणाम भुगतने पड़ते हैं।

जबसे अत्यंत जहरी रासायनिक जंतुनाशकों (पेस्टीसाईड) और रासायनिक खाद (यूरिया आदि) का उपयोग बढ़ा, तबसे पर्यावरण हेतु भयंकर खतरे पैदा हुए हैं। फसलों के हानिकारक जीवों की रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ गयी, वे इन जहरी दवाओं को पचाने लगे जिससे और अधिक जहरी दवाइयाँ बनानी पड़ीं। फलस्वरूप भूमि की उर्वराशक्ति नष्ट होने लगी। भूमि के अनुपजाऊ और जहरी बन जाने से उसकी उत्पादन-क्षमता घटने लगी।

अधिकांश खेतों में आधुनिक तकनीक और ट्रैक्टरों के उपयोग बढ़ने से बैलों का उपयोग बंद हो गया है जिससे उनके गोबर तथा मूत्र से खेतों को मिलनेवाला पोषण भी बंद हो गया। बैल कत्लखानों में भिजवाये जाने लगे तो दूसरी तरफ ट्रैक्टर के धुँए ने पर्यावरण को और अधिक विषैला बना दिया। उनके राक्षसी वजन से और गहराई तक भूमि को खोदने से, भूमि के भीतर केंचुएँ आदि जीवों का और भीतरी नमी का नाश होने से भूमि बंजर होने लगी।

भूमि में जंतुनाशक दवाओं का असर लंबे समय तक रहने से कई वर्षों तक उस भूमि में उत्पन्न होनेवाले अन्न में इनके प्रभाव पाये गये हैं। और दूसरे खतरनाक परिणामस्वरूप जहरी जंतुनाशकों के असर से मनुष्य के शरीर में भी जहर का संग्रह होने लगा जिससे सिरदर्द, चक्कर आना, पेट का दर्द, दस्त, ज्यादा मात्रा में पसीना, कमजोरी, कंपन, चमड़ी के रोग और श्वसन तंत्र के अनेक रोग होते हैं। मनुष्य की चरबी के कोषों में यह जंतुनाशक जहर वर्षों तक इकट्ठा होकर कैन्सर जैसी भयंकर बीमारी को जन्म देता है। ई.स. १९९४ में अमेरिका में हुई खोज के अनुसार इन विषैले जंतुनाशकों की असर फलों तथा सब्जियों पर अधिक मात्रा में होती है। इन जंतुनाशकों की असरयुक्त घास खाने से पशुओं के दूध में भी जहरी अंश देखने को मिले हैं। ये सभी अंत में मनुष्य-शरीर को ही हानि पहुँचाते हैं।

जो किसान पंप द्वारा इन दवाइयों को खेत में छिड़कते हैं, उनके शरीर में ये दवाइयाँ श्वास द्वारा पहुँचकर श्वसन तंत्र और पाचन तंत्र के रोगों को जन्म देती हैं। इससे किसानों की आयु घट गयी और कितने ही किसान तो युवावस्था में ही मृत्यु का ग्रास बने हैं, ऐसे भी मामले दर्ज किये गये हैं।

भूमि को उपजाऊ बनाने का कार्य सूक्ष्म तत्त्वों, सूक्ष्म जीवाणुओं तथा केंचुओं द्वारा दिन-रात हो ही रहा है। उन पर जहरी दवाइयाँ छिड़कने के कारण प्रकृति के कार्य में हस्तक्षेप होने से उत्पादन में कमी आयी है और समग्र अर्थतंत्र को नुकसान पहुँचा है।

इन समस्याओं के निवारण हेतु यह प्रयोग श्रेष्ठ सिद्ध होगा : किसान खेत में खड़े होकर अपनी प्रेमभरी दृष्टि फसलों की तरफ डाले और प्यार से उन पर हाथ फेरे। इससे फसलों पर बड़ी गहरी असर होती है और उत्पादन बहुत बढ़ जाता है, क्योंकि वनस्पति भी संवेदना और सुख-दुःख का अनुभव कर सकती है, यह आज सभी जानते हैं।

अतः प्रकृति की तरफ फिर से मुड़ने में ही सार है। अत्यंत जहरी रासायनिक जंतुनाशकों के बदले गौमूत्र, वनस्पतिजन्य फसल-रक्षक और यूरिया जैसी रासायनिक खाद की जगह पर 'केंचुआ खाद' का प्रयोग कर कई किसानों ने अच्छे परिणाम पाये हैं। व्यापक रूप से गौमूत्र का उपयोग कीट-नियंत्रक के रूप में करने से उसका सही मूल्य समझ में आयेगा। निर्दोष गाय और बैल कत्लखाने जाने से बच जायेंगे। 'गौवंश मात्र दूध के लिए उपयोगी है' - यह अर्धसत्य है। वास्तव में गौमूत्र और गोबर आजीवन प्राप्त होने से गौवंश अन्त तक उपयोगी

सिद्ध होगी, यह बात सबकी समझ में आयेगी।

केंचुआ जमीन से प्राप्त गोबर कीटकों के अवशेष, मुलायम मिट्टी, पत्ती आदि खाते हैं। उनकी आँतों में गीझर्ड नाम के हिस्सों में छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं जिसकी सहायता से सेंद्रिय पदार्थों को अणुरूप में विभाजित किया जाता है। इन अणुओं को पचाकर बचा हिस्सा गोलीनुमा आकार में विष्ठा के रूप में बाहर आता है। केंचुओं के पेट में चल रही रासायनिक प्रक्रिया के कारण मूलतः सेंद्रिय खाद्य पदार्थों में उपलब्ध नत्र, स्फुरद, पलाश, कैल्शियम तथा अन्य सूक्ष्म तत्त्व उनके शरीर से अधिक मात्रा में निकलते हैं। नत्र की मात्रा ७ गुना, स्फुरद ११ गुना, पलाश १३ गुना बढ़कर प्राप्त होता है। इसमें विटामिन एन्जाइम्स, एण्टी बायोटिक और संजीवकों की प्राप्ति होती है जो इसे सर्वगुणसम्पन्न खाद बना देती है। यह केंचुआ प्रदत्त खाद प्रकृति द्वारा किसानों को वरदान-स्वरूप प्राप्त होती है।

इस क्षेत्र में 'संत श्री आसारामजी गौसेवा केन्द्र, निवाई (राज.)' महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। वहाँ ४७०० गायें रहती हैं। उनके गोबर से सस्ती और उत्तम गुणवत्तायुक्त **'गौसेवा केंचुआ खाद'** निर्मित की जा रही है। किसान अपने-अपने क्षेत्रों में भी इस खाद का निर्माण कर सकते हैं। उनको केचुएँ भी दिये जायेंगे और खाद बनाने की विधि भी सिखायी जायेगी, जिससे किसान भाइयों की भूमि उपजाऊ हो और फसल भी अधिक हो व मानव विषैले अन्न, फल व सब्जियों से बचकर पौष्टिक अन्न, फल तथा सब्जियाँ प्राप्त कर सके। साथ ही अंग्रेजी खादों में जो देश के करोड़ों रुपये जाते हैं, वे भी बचेंगे। सभी देशवासी किसान इस अभियान में शामिल होकर अपने इलाकों में 'केंचुआ खाद' बनायें। इसमें आश्रम की तरफ से जो मदद चाहिए यथासम्भव दी जायेगी। गरीब किसानों के लिए विशेष सहानुभूति, विशेष उदारता। **सम्पर्क करें** : (१) मुख्यालय संत श्री आसारामजी गौसेवा केन्द्र, बाइपास रोड, निवाई, जि. टोंक (राज.). फोन : (०१४३८)८२२५४० (२) अखिल भारतीय श्री योग वेदान्त सेवा समिति, किसान उत्थान अभियान विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-३८०००५. फोन : (०७९)७५०५०१०-११.

सीखने के लिए संपर्क : उपर्युक्त पते (१) व (२) के अतिरिक्त : (३) संत श्री आसारामजी आश्रम, बिलावली तालाब के पास, कस्तूरबा ग्राम, खंडवा रोड, इन्दौर। फोन : (०७३१)४७८०३ (४) संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-३८९००५. फोन (०२६१)२७७२२०१ (५) संत श्री आसारामजी आश्रम, खजरी, जि. छिन्दवाड़ा-४८०००१. फोन (०७१६२)४७५७७.

'गौसेवा केंचुआ खाद' की विशेषताएँ :

यह जमीन की उर्वराशक्ति की रक्षा कर भूमि के पोषक तत्त्वों को बढ़ाती है। यह जमीन के सम्पूर्ण पोषण के लिए वरदान-स्वरूप है। यह जमीन की भौतिक व रासायनिक दशाओं को सम बनाये रखकर जमीन की ऊपरी संरचना को सुधारती है। मिट्टी में वायु के मिश्रित होने में मदद कर, जमीन को नरम (पोली) बनाती है जिससे मिट्टी की जल धारणशक्ति में भी वृद्धि होती है। पौधों को आसानी से पोषण प्राप्त होता है और उनकी अच्छी वृद्धि होती है।

'गौसेवा केंचुआ खाद' भूमि में लाभदायक जीवाणुओं की वृद्धि कर हानिकारक जीवाणुओं को हटाती है तथा जमीन को निरोगी रखती है। यह कुदरती रूप से क्रियाशील बहुत ही असरकारक खाद है। इसके नियमित प्रयोग से जमीन को संपूर्ण पोषक तत्त्व मिलते हैं। इसे सभी प्रकार के पेड़-पौधों में डाला जा सकता है।

रासायनिक खाद से हानि :

रासायनिक खाद के लगातार प्रयोग से नष्ट हो रही उर्वराशक्ति के कारण जमीन अनुपजाऊ/बंजर हो रही है। रासायनिक उर्वरकों के लगातार उपयोग से भूमि उपयोगी सूक्ष्म तत्त्वों, सूक्ष्म जीवाणुओं तथा जीवाश्मों को खो चुकी है। भूमि की पोषक शक्ति का क्षय हुआ है। इनके प्रयोग से पौधों की प्रतिरोधक क्षमता घट गयी है तथा फलों, सब्जियों और अनाजों के स्वाद, आकार, रंग तथा उत्पादन में कमी होने लगी है। साथ ही रासायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग से पर्यावरण को भी अत्यधिक नुकसान पहुँचा है। इन खादों से उत्पादित अन्न के प्रयोग से लोगों के स्वास्थ्य को भी काफी क्षति हुई है।

जल-पान विचार

तृप्ति, संतोष व उत्साह की उत्पत्ति, अन्न के पाचन, रसादि धातुओं के रूपान्तरण और संपूर्ण शरीर में रक्त के यथायोग्य परिभ्रमण के लिए जल तथा अन्य पेय पदार्थों की आवश्यकता होती है। सभी पेय पदार्थों में पानी सर्वश्रेष्ठ है । इसे 'जीवन' कहा गया है । शारीरिक बल, आरोग्य और पुष्टि की वृद्धि में जल सहायक होता है।

पानी कब, कितना और कैसे पीना चाहिए ? इसके बारे में संशय उत्पन्न हो जाय, इतने मत-मतान्तर प्रचलित हैं । आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार पानी का समयानुसार प्रयोग अलग-अलग परिणाम दिखाता है।

अजीर्णे भेषजं वारि जीर्णे वारि बलप्रदम् ।
भोजने चामृतं वारि भोजनान्ते विषप्रदम् ।।

'अर्थात् अजीर्ण होने पर जलपान औषधवत् काम करता है। भोजन के पच जाने पर अर्थात् दो घंटे बाद पानी पीना बलदायक होता है । भोजन के मध्यकाल में पानी पीना अमृत के समान और भोजन के अंतकाल में विष के समान अर्थात् पाचनक्रिया के लिए हानिकारक होता है।'

जठराग्नि प्रदीप्त रखने के लिए थोड़ा-थोड़ा पानी बार-बार पीना चाहिए। भोजन से पहले पानी पीने से जठराग्नि मंद हो जाती है, शरीर कृश हो जाता है। भोजन के बाद तुरंत पानी पीने से स्थूलता आती है परन्तु भोजन के बीच में पानी पीने से पाचनक्रिया ठीक होती है, धातुसाम्य व शरीर का संतुलन बना रहता है।

आमाशय के चार भाग मानकर दो भाग अन्न सेवन करें । एक भाग जल तथा पेय पदार्थों से भरें और एक भाग वायु के संचरण के लिए रखें। यह उचित भोजन पद्धति है। इससे भोजन के बाद पेट में भारीपन, हृदय की गति में अवरोध अथवा श्वासोच्छ्वास में कष्ट का अनुभव नहीं होता है।

स्वस्थ, निरोगी अवस्था में पानी की अधिक आवश्यकता नहीं होती । ग्रीष्म व शरद ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतुओं में पानी कम मात्रा में ही पीना चाहिए। इन दो ऋतुओं में नैसर्गिक उष्णता व पित्त प्रकोप हो जाने के कारण पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

जल-पान के साथ इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि भोजन में पानी का उपयोग, द्रव-तरल व स्निग्ध पदार्थों का समावेश सही मात्रा में हो। भोजन रूखा-सूखा नहीं होना चाहिए । भोजन में पतली दाल, सब्जी, कढ़ी, रस, छाछ आदि का समावेश करने से पानी की आवश्यक मात्रा की पूर्ति अपने-आप हो जाती है।

ऊषःपान

ऊषःपान अर्थात् प्रातः सूर्योदय से पहले पानी पीना। आयुर्वेद के 'योगरत्नाकर ग्रंथ' में इसके बारे में लिखा गया है :

विगत घननिशीथे प्रातरुत्थान नित्यं ।
पिबति खलु नरो यो घ्राणरन्ध्रेण वारि ।।
स भवतिमतिपूर्णश्चक्षुषाताक्ष्यर्तुल्यः ।
वलियलितविहीनः सर्वरोगैर्विमुक्तः ।।

प्रातः सूर्योदय से पहले, कुल्ला करके, रात का रखा हुआ दो से चार बड़े गिलास अर्थात् आधे से सवा लीटर पानी रोज नियमित रूप से पीने से सब रोगों से मुक्ति होती है । ऊषःपान से मति व दृष्टि गरुड़ के समान तीक्ष्ण हो जाती है।

अनेक कष्टसाध्य बीमारियों में जैसे- मधुमेह, दमा, संधिवात, अम्लपित्त, मोटापा तथा पेट के विविध प्रकार के रोगों, स्त्रियों के अनियमित मासिक तथा श्वेतप्रदर में इस प्रयोग से चमत्कारिक लाभ दिखायी देते हैं।

यह अत्यंत सरल प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। प्रारंभ में एक साथ चार गिलास पानी नहीं पी सकें तो एक गिलास से शुरू करके धीरे-धीरे, एक-एक गिलास बढ़ाते जायें । फिर नियमित रूप से यह प्रयोग जारी रखें। प्रातः पानी पीने के बाद लगभग एक घंटे तक कुछ खायें-पीयें नहीं । सुबह के अल्पाहार तथा दोपहर व रात्रि के भोजन के बाद दो घंटे बीत

जाने पर ही पानी पीयें।

जल-पान के लिए ताम्र का पात्र आरोग्यप्रदायक व पवित्र माना गया है। जल चिकित्सा (हाईड्रोथेरेपी) के अनुसार रातभर ताँबे के बर्तन में रखा हुआ पानी अधिक लाभदायी है। ताँबे का बर्तन भी जमीन के ऊपर न रखा हो। उसे लकड़ी जैसे विद्युत के कुचालक पदार्थ पर रखना चाहिए। सुबह वह पानी पीते समय पीनेवाले के पैर भी जमीन का स्पर्श न करें यानी कम्बल या टाट पर बैठकर पानी पीना चाहिए।

विविध व्याधियों में जल-पान विचार

(१) ज्वर : ज्वर में उबालकर आधा किया हुआ पानी ही पिलायें। तीव्र ज्वर में अधिक पानी की आवश्यकता होती है। १ लीटर पानी में सौंठ, पित्तपापड़ा, नागरमोथ, खस, कालीखस, चंदन इन सबका १-१ ग्राम चूर्ण मिलाकर पानी एक चौथाई रह जाय तब तक उबालें। फिर छानकर, ठंडा किया हुआ पानी थोड़ा-थोड़ा करके बार-बार रोगी को पिलायें। इस समय ७२ घंटे अन्य औषध या आहार न दें। इससे आम का पाचन होने से ज्वर से छुटकारा मिलता है।

(२) सूतिकावस्था : प्रसूति के बाद अजवायन, वायविडंग व जीरा डालकर उबाला हुआ पानी पीने से अनेक व्याधियों से रक्षा होती है। भूख खुलकर लगती है व गर्भाशय की शुद्धि होती है।

(३) अजीर्ण, अफरा व पेट के अन्य विकार : एक लीटर पानी में एक चम्मच अजवायन डालकर उबालें। जब पानी आधा रह जाय तब छानकर गुनगुना पानी बार-बार रोगी को पिलायें।

(४) अतिसार : उपरोक्त विधि (नंबर ३) में अजवायन की जगह साबुत सौंठ डालकर पानी बनायें। कपड़े से दो बार छानकर यह पानी दिनभर पीने के काम में लायें। आहार न लें। इससे आम का पाचन व मल का संग्रहण होता है।

बहुमूत्रता (पेशाब का अधिक आना), दमा, श्वास व अन्य कफविकारों में भी यह सिद्ध जल बहुत लाभदायी है। लाभ होने के बाद भी कुछ दिन तक यह प्रयोग चालू रखें।

(५) पित्तविकार : उपरोक्त विधि (नंबर ३) में अजवायन की जगह सूखे धनिये का बनाया हुआ सिद्ध जल शरीर तथा आँखों की जलन, अम्लपित्त, पेट के छाले, खूनी बवासीर में अत्यंत उपयोगी है। मिश्री मिलाकर पीने से अधिक फायदा होता है।

चाय, काफी तथा अन्य मादक द्रव्यों का सेवन करनेवाले व्यक्तियों हेतु यह प्रयोग विषनाशक है।

उष्णोदक पान

गुनगुना पानी आम का नाश करनेवाला, अग्निदीपक व कफ-वातनाशक होता है। उष्णोदक पान (गरम पानी) से मल-मूत्र की प्रवृत्ति साफ होती है। श्वास व कास (खाँसी) व्याधियों में उष्णोदक पान हितावह है।

मोटापे में प्यास लगने पर अथवा भोजन के बीच में भी केवल उष्णोदक पान करने से वजन घटने लगता है। सुबह हलके गुनगुने पानी में शहद मिलाकर लें। गरम पानी व शहद मिलाकर लेना विरुद्ध आहार होने के कारण निषिद्ध है।

जल-पान निषेध

❊ जलोदर में पानी पूर्णतः निषिद्ध है।

❊ प्लीहावृद्धि, पांडुरोग, अतिसार, बवासीर, ग्रहणी, मंदाग्नि व सूजन में अत्यंत आवश्यक हो तभी, अल्प मात्रा में तथा उपरोक्त विधि से औषध द्रव्यों से बनाया हुआ सिद्ध जल ही देना चाहिए।

❊ अत्यंत शीतल जल का सेवन न करें। इससे गले के रोग, कफ तथा वातविकार व अग्निमांद्य होने की संभावना रहती है।

❊ तेज धूप से आकर व अत्यंत भूख लगने पर पानी पीना विषपान करने के समान है।

❊ बासी पानी का प्रयोग बहुत प्यास लगने पर भी न करें। यह अम्लधर्मी होने के कारण कफ को बढ़ाता है।

❊ अंजलि से पानी नहीं पीना चाहिए।

❊ आजकल प्यास लगने पर अथवा भोजन के समय भी पानी की जगह **कोल्ड ड्रिंक्स** अथवा **आईसक्रीम** का उपयोग फैशन के नाम पर किया जाता है। ये शरीर में थोड़े समय के लिए तो ठंडक उत्पन्न करते हैं परन्तु आंतरिक गर्मी को बढ़ाते हैं, मज्जातंतुओं को उद्दीप्त करते हैं और कामोत्तेजना बढ़ाते हैं। इनके सेवन से झूठी भूख लगती है व स्थूलता आती है। अतः इनका सेवन न करें।

- साँई श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, जहाँगीरपुरा, सूरत।

सुन लो बापू यह पैगाम मेरी चिट्ठी आपके नाम

सादर हरिस्मरण... परम पूज्य सद्गुरु संतशिरोमणि श्री आसारामजी बापू के चरणकमलों में सभी दिशाओं से प्रणाम पहुँचे।

मैं विगत ८ वर्षों से उच्च रक्तचाप और लगभग ३ वर्षों से अवसाद (डिप्रेशन) से पीड़ित था। मैं अपने हृदय को विकारों से बचाने में स्वयं को असमर्थ पाता था और मेरे हृदय में दुश्चिंताओं का जबरदस्त कब्जा हो चुका था। स्वाध्याय, पूजा और सत्कार्यों में मन लग ही न पाता था। ऐसे में मनोविभ्रम से पिंड छुड़ाने के कई उपाय भी किये किन्तु सब बेकार साबित हुए। मेरे पुण्यों का प्रभाव कहिये कि मैंने ११ दिसम्बर १९९८ को अम्बिकापुर में पूज्य बापू का दर्शन पाया और उनकी अमृतवाणी का रसास्वादन किया।

पूज्य बापू ने प्रवचन के प्रारंभ में ही ईश्वर की शरण ग्रहण करने की सलाह देते हुए निम्न उद्गारों को बड़े प्यार से समझाना शुरू किया तो मेरा मुँह खुला-सा रह गया। उनका एक-एक शब्द मेरे लिए गुरुमंत्र जैसा प्रभावकारी होने लगा :

मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चोरा॥
मैं एक अमित बट मारा। कोऊ सुनै न मोर पुकारा॥
भागेउ नहिं नाथ उबारा। रघुनायक करहुँ सँभारा॥
चिन्ता यहि मोहि अपारा। अपजस जनि प्रभु होइ तुम्हारा॥

पूज्य बापू की वाणी को हृदयंगम करके मैंने अपने अंदर परिवर्तन महसूस किया और सत्संग समाप्ति के समय **'हरि ॐ... हरि ॐ...'** कीर्तन की मधुर ध्वनि पर मेरा शरीर और मनमयूर नृत्य करने लगा।

उक्त सत्संग की समाप्ति के उपरांत मैंने स्टॉल से पूज्य बापू की मनोहर चित्रों से युक्त डायरी, कैलेन्डर, पेन, सत्साहित्य आदि खरीदे व **'ऋषि प्रसाद'** और **'लोक कल्याण सेतु'** की वार्षिक सदस्यता भी ग्रहण की।

मैं इस पत्र के माध्यम से पूज्य बापू के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए श्रद्धालुओं के समक्ष इस बात की गवाही देना चाहता हूँ कि मैं अब ब्लडप्रेशर की गोलियों का सेवन किये बिना स्वयं को स्वस्थ महसूस कर रहा हूँ और पूज्य बापू के सत्संग के प्रथम दिवस यानी ११ दिसम्बर १९९८ से ही मेरे अंदर शांति, आनन्द, सात्त्विकता तथा निर्भीकता का उदय हुआ है। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि मैं अपने सम्पर्क-क्षेत्र के लोगों में पूज्य बापू की महान दया-करुणा और स्नेह के प्रसाद का वितरण कर सकूँ। इसी कामना के साथ...

- स्वामी आत्मोविमल (राजेन्द्र प्रसाद शर्मा), ओशो सत्य कमल ध्यान केन्द्र, कौशलपुर, पो. रामानुज नगर, जि. सरगुजा (म. प्र.).

बेल का शर्बत

बेल के ताजे पके हुए फलों के आधा सेर गूदे को २ सेर पानी में आग पर पकायें। एक सेर पानी शेष रहने पर छान लें। उसमें २ सेर चीनी मिला दें। ठंडा होने पर छानकर बोतलों में भर लें।

मात्रा और अनुपान : २ से ४ तोला दिन में २-३ बार आवश्यकतानुसार जल में मिलाकर लें।

गुण और उपयोग : यह शर्बत प्रवाहिका, अतिसार, विशेषतः रक्तातिसार, संग्रहणी, आमदोष, खूनी बवासीर, रक्तप्रदर, पुराना कब्ज, मानसिक सन्ताप, अवसाद, भ्रम तथा मूर्च्छा को नष्ट करता है। हृदय को उत्तम बल प्रदान करता है। यह रस-रक्तादि धातुवर्द्धक है।

{१ सेर = ९३३ ग्राम, २ तोला = २३.३३ ग्राम}

[संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा संचालित धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र, अमदावाद]

गुरुकृपा ऐसी हुई कि अँधेर तो क्या देर भी नहीं हुई

परम कृपालु बापूजी के श्रीचरणों में मेरे कोटि-कोटि वन्दन...

मैं एक इस्माइली ख्वाजा हूँ तथा अपने धर्म में अडिग हूँ। चार वर्ष पूर्व एक सुनियोजित योजना बनाकर मुझे जबरदस्ती 'मर्डर केस' का आरोपी बना दिया गया था। इससे मुझे कहीं भी शांति नहीं मिल रही थी।

२८ फरवरी १९९७ को मुझे नागपुर में आयोजित बापूजी के सत्संग में जाने की प्रेरणा मिली और ४ मार्च १९९७ को मैंने बापूजी से मंत्रदीक्षा ली। मैंने उनसे मन-ही-मन विनती की कि : ''हे गुरुदेव ! मुझे बचा लो।''

गुरुकृपा ऐसी हुई कि ७ जनवरी १९९८ को मुझे अदालत ने पाक-साफ बरी कर दिया। बाकी छः आरोपियों को सजा हुई !

धन्य हैं ऐसे मेरे सद्गुरु ! उनके श्रीचरणों में मेरे कोटि-कोटि वन्दन... *- रहमान खान*

निशान छाबड़ी (बिछुआ), जि. छिन्दवाड़ा (म. प्र.).

जिन्हें सत्य स्वरूप परमात्मा का बोध है, जो श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ हैं, स्व-स्वरूप में जगे हैं, परहितपरायण हैं- ऐसे सद्गुरुओं की प्राप्ति अति कठिन है। ऐसे सद्गुरु मिलते हैं तो हमारा आमूल परिवर्तन हो जाता है, देहाध्यास गलने लगता है, चित्त सत्पद में विश्रान्ति पाने लगता है। *(आश्रम की 'साधना में सफलता' पुस्तक से)*

कोलकाता (पं. बंगाल), १८ से २१ अप्रैल : महानगर में ग्रीष्म ऋतु की तपन से नगरवासी तप्त हो रहे थे, लेकिन आश्रम में बापूजी के पदार्पण होते ही प्रकृति ने अपना रंग बदला। रिमझिम बारिश हुई, सूर्यदेव की तपन कुछ कम हुई, मानों, प्रकृति ब्रह्मवेत्ता सत्पुरुष के स्वागत में तत्पर हो। ऐसा केवल कोलकाता ही नहीं बल्कि बापूजी के पदार्पण से अमृतसर, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश), कठुआ (जम्मू-कश्मीर), लुधियाना, करनाल व हरिद्वार में भी हुआ। मौसम बदल गया...

गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥

सारा वातावरण मधुमय हो गया। आग बरसाते हुए सूर्य को ढँककर बादलों ने गर्मी को शीतलता में बदल दिया। पवन के तेज झोंकों ने वातावरण के प्रदूषण को दूर कर दिया और पहली बारिश के कारण धरती की सुगंध से वातावरण महक उठा। परमात्म पुरुष में जगे हुए संत के स्वागत से प्रसन्न प्रकृति की यह लीला देखते ही बनती थी। धूल के कण धरती में समा गये। कुछ गंगासागर में चले गये और प्रदूषण को हवाओं ने समेट लिया। सभी सत्संगियों को इस मधुरतावाले, रिमझिमवाले ठंडे मौसम का एहसास हुआ।

चार दिवसीय सत्संग में ब्रह्मनिष्ठ बापूजी ने गीता-भागवत के भगवदीय ज्ञान के अलावा स्वास्थ्य की भी अनेक बातें बतायीं। कलकत्तावासियों को स्वस्थ रहने के लिए 'साँईं लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, सूरत' द्वारा निर्मित 'गौझरण अर्क' या 'गौझरण वटी' सेवन करने की सलाह दी। नमीवाले वातावरण में रहनेवाले लोगों के लिए यह हितकारी है।

हर प्रकार की विपत्ति, चिन्ता और संकट की निवृत्ति का रामबाण उपाय बताते हुए बापूजी ने कहा : **''केवल भगवान में ही विश्वास, केवल भगवान की ही आवश्यकता और केवल भगवान में ही प्रीति – ये तीन बातें जिस साधक के जीवन में होती हैं, उसका योगक्षेम भगवान स्वयं वहन करते हैं। सांसारिक**

कष्टों के निवारण का उपाय है भगवद्आश्रय और भगवद्प्राप्ति का पुरुषार्थ बढ़ाना।''

लखनऊ (उ.प्र.), २५ से २८ अप्रैल : कानपुर रोड स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में चार दिवसीय सत्संग-समारोह सम्पन्न हुआ। पहले दिन उ.प्र. के राज्यपाल महामहिम श्री विष्णुकांत शास्त्री सपरिवार दत्तचित्त होकर पौने दो घण्टे तक सत्संग-श्रवण कर गद्गद हो रहे थे। मानों बरसों तक किये हुए शास्त्रों के अध्ययन का एक अनुभवगम्य प्रत्यक्ष प्रमाण ही उनको सत्संग में प्राप्त हुआ हो। महामहिम राज्यपाल की शास्त्रीय सूझबूझ और संतों के प्रति उनकी आस्था सत्संग में देखने को मिली। आयोजकों ने उनके लिए ऊँचे बैठने की व्यवस्था की थी, पर वे धरती पर ही बैठ गये। जैसे शुकदेवजी के श्रीचरणों में परीक्षित आ बैठे थे, वैसे ही बापूजी के सत्संग में महामहिम राज्यपाल धरती पर ही बैठ गये। पूज्यश्री के प्रवचन के पश्चात् उपस्थित श्रद्धालुओं के विशाल समुदाय को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा : 'हम सबको बापूजी के बताये रास्ते पर चलना चाहिए। नवनीत तो ताप से पिघलता है परन्तु संतों का हृदय लोगों के दुःख से द्रवित हो जाता है और उनके द्वारा लोकमंगल के दिव्य कार्य होते रहते हैं।'

संत हृदय नवनीत समाना।

पूज्यपाद बापूजी ने आश्रम की ओर से विकलांगों को तीन पहियों की साइकिलें भेंट कीं। बापूजी के करकमलों से प्रसाद व तीन पहियों की साइकिलें प्राप्त कर उनके चेहरे प्रसन्नता से खिल उठे। २७ अप्रैल को चैत्री पूर्णिमा व हनुमान जयंती के अवसर पर देश के दूर-सुदूर के क्षेत्रों से आये पूनम व्रतधारियों ने दर्शन-सत्संग का परमप्रसाद पाकर भोजन प्रसाद लिया। भक्तों की विशाल संख्या को ध्यान में रखते हुए पूज्यपाद बापूजी ने २८ अप्रैल की शाम राजधानी दिल्ली के नाम कर दी। पूनम व्रतधारियों के लिए वे दोपहर १.३० बजे लखनऊ से दिल्ली प्रस्थान कर गये। विभिन्न राज्यों से आये पूर्णिमा व्रतधारियों व श्रद्धालुओं का सैलाब देखते ही बनता था। धन्य है उन श्रद्धालुओं की श्रद्धा और व्रतनिष्ठ साधकों की व्रतनिष्ठा!

अमृतसर (पंजाब), २ से ५ मई : अमृतसर के कंपनी बाग के विशाल मैदान में ४ दिन तक पूज्यश्री ने अध्यात्मज्ञान की गंगा बहायी। स्थानीय बालभक्तों ने लोक नृत्य भांगड़ा प्रस्तुत कर पूज्यश्री का स्वागत किया। साहस, स्नेह से संपन्न ज्ञानमय प्रकाश पाकर श्रोताओं ने रसमय और सुखमय जीवन की कुंजियाँ पायीं। इस लोक और परलोक में परमसुखी होने का प्रसाद पाकर सभी गद्गद हो गये और खुशहाल नजर आये। ये आप सभीका भी अनुभव होगा।

पूज्यश्री ने भगवान की दया और कृपा की विस्तृत व्याख्या करते हुए कहा : **''माता द्वारा बच्चे का पालन-पोषण करना उसकी दया है लेकिन उसे रगड़कर नहलाना और विद्यालय न जाने पर चपत (थप्पड़) लगाना उसकी कृपा है। सुख और अनुकूल परिस्थितियों को ईश्वर की दया तथा दुःख और प्रतिकूल परिस्थितियों को ईश्वर की कृपा समझकर सहर्ष शिरोधार्य करना चाहिए। दया से मनुष्य सुख-सुविधाओं का भोगी बन जाता है। तब उसे सावधान करने के लिए भगवान कृपा करके प्रतिकूल परिस्थितियाँ भेजते हैं। सारी परिस्थितियों के सिर पर पैर रखकर आगे बढ़ने की कला सीख लो... निश्चय ही विजय तुम्हारी होगी।''**

करनाल (हरियाणा), १७ से १९ मई : अमृतसर में सत्संग-प्रवचन के बाद पूज्यश्री अज्ञातवास में पालमपुर (हि.प्र.) गये। वहाँसे कठुआ (जम्मू-कश्मीर), जालंधर, लुधियाना (पंजाब), अंबाला होते हुए करनाल (हरियाणा) पहुँचे। उक्त स्थानों में दर्शन-सत्संग के प्यासे भक्तजन अपने बीच प्यारे सद्गुरुदेव को पाकर फूले नहीं समाये।

स्थानीय समिति की साढ़े छः वर्षों की सत्संग-प्रवचन की माँग पूरी हुई, जब पूज्यश्री ने अपने एकांतवास के अमूल्य समय में से करनालवासियों को ३ दिन का समय दे दिया। उपस्थित धर्मप्रेमी श्रद्धालुओं को सत्संग की महत्ता बताते हुए ब्रह्मनिष्ठ बापूजी ने कहा : **''प्रतिकूल परिस्थिति में दुःखी होना, अनुकूल परिस्थिति में आसक्त होना और चिंता, शोक व अहंकार आदि विकारों का शिकार होना ही 'ज्वर' है। सत्यस्वरूप परमात्मा में विश्रांतिवाला सत्संग ज्वरों से मुक्ति देता है।''**

जगाधरी (यमुनानगर, हरियाणा) : १९ मई की शाम को पूज्यश्री जगाधरी पहुँचे, जहाँ ६ से ८ बजे तथा दूसरे दिन भी प्रवचन-प्रवाह चला। बापूजी ने सीमा के

सैनिकों का हौंसला बुलंद करने व राष्ट्रविरोधी तत्त्वों से सफलतापूर्वक निपटने के लिए एक विशेष मंत्र बताया और समिति को आदेश दिया कि यह सीमा पर देश के सैनिकों तक यह मंत्र शीघ्र पहुँचाये।

हरिद्वार (उत्तरांचल) : जगाधरी में सत्संग-प्रवचन पूर्ण कर २० मई की शाम पूज्यश्री तीर्थभूमि हरिद्वार पहुँचे, जहाँ २३ से २६ मई तक ज्ञान-भक्ति-योग की अमृतवर्षा हुई। हिमाचल प्रदेश, कुमाऊँ, हिमालय तथा उत्तरांचल के विभिन्न क्षेत्रों के अलावा अनेक प्रांतों से आये पूनम व्रतधारी साधकों तथा श्रद्धालुओं ने पंतद्वीप गंगातट पर पूज्यश्री की आत्मस्पर्शी सत्संग-गंगा में स्नान करके अपना जीवन धन्य बनाया।

संत श्री आसारामजी बापू के पंतद्वीप में चल रहे गीता भागवत सत्संग का आलम आज दूसरे दिन कुछ निराला ही था। सत्संग में बापूजी ने राष्ट्र-विजय और सैनिकों की रक्षा व उनका हौसला बुलंद करने के लिए एक विशिष्ट मंत्र दिया।

ॐ उग्रं वीरं महा विष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्।
नृसिंह भीषणं भद्रं मृत्यु मृत्युं नमाम्यहम्॥

पूज्य बापूजी ने कहा : "**जब-जब राष्ट्र या विश्व पर विनाश का खतरा मँडराया है, तब-तब तत्कालीन संतों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इस विशिष्ट मंत्र के जाप और उच्चारण से संकट की निवृत्ति होती है। आतंकवाद का खौफ दूर होता है।**" उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा : "**यह मंत्र देश के सैनिकों तक शीघ्र पहुँचना चाहिए।**"

देश पर छाये युद्ध और आतंक की विभीषिकाओं के बीच बापू का हृदय देशप्रेम और सीमा पर सैनिकों की रक्षा के लिए उमड़ पड़ा।

पूज्य बापूजी ने उपस्थित साधु-संतों, श्रोताओं के साथ 'हरि ॐ' के पावन गुंजन से देश और सैनिकों की रक्षा, राष्ट्र की विजय और विश्व से आतंकवाद की समाप्ति के लिए अपना संकल्प ब्रह्मांड में छोड़ा।

श्रीकृष्ण द्वारा युद्ध के मैदान में ज्ञान, भक्ति और कर्म की महिमा जिस प्रकार गीता में बतायी गयी है, उसी प्रकार आज के कठिन वातावरण में बापू ने उपस्थित श्रोताओं को जीवन्मुक्ति का मार्ग बताते हुए कहा : "**भगवान का आश्रय लेने से शाश्वत ज्ञान की झलक मिलती है और नश्वर का आसरा लेने से नश्वर संसार मिलता है तथा जीवात्मा जन्मों-जन्मों तक जन्म-मरण के चक्कर में फँसा रहता है। जीव की जिस प्रकार की इच्छा-वासना होती है, उसका जन्म उसी प्रकार की योनियों में होता है। सात्त्विक इच्छाओं के पोषण से उच्च कुल और सत्संग मिलता है और ईश्वरप्राप्ति सुगम हो जाती है।**"

भारत के वैदिक ज्ञान की प्रमाणिकता पर प्रकाश डालते हुए योगीराज पूज्य बापूजी ने कहा : "**वैदिक ज्ञान सनातन है, इसे किसीने बनाया नहीं है। भगवान राम और कृष्ण के जन्म से पूर्व भी वैदिक ज्ञान था। वैदिक ज्ञान और शृंगी ऋषि के आशीर्वाद से राजा दशरथ ने यज्ञ किया और यज्ञ के प्रसाद रूप में यज्ञपुरुष द्वारा खीर के कटोरे से भगवान राम के अवतरण का आशीर्वाद राजा दशरथ को मिला। यह इस बात का प्रमाण है कि वैदिक ज्ञान रामजी के जन्म से पूर्व भी था। इस ज्ञान का कभी क्षय नहीं होता।**"

मानव-जीवन का सबसे बड़ी बहादुरी का कार्य क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर बहुत ही सरल शब्दों में श्रोताओं को समझाते हुए उन्होंने कहा : "**अपनी इच्छाओं, वासनाओं पर विजय पाना ही सबसे बड़ी बहादुरी का कार्य है। यही बड़े-से-बड़ा पुरुषार्थ है।**"

स्वभाव बदलने की कुंजी बताते हुए उन्होंने कहा : "**सत्संग स्वभाव बदलने की कुंजी है। जो सत्संग में आते हैं, वे संसार की नश्वरता छोड़कर परमात्मा में प्रीति बढ़ाने की रीति जान लेते हैं।**"

सत्संग से सभी प्रकार के व्यक्तियों के लिए ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग सुलभ हो जाता है, चाहे फिर वे भक्ति मार्ग, ज्ञान मार्ग या योग मार्ग, किसी भी मार्ग के पथिक क्यों न हों। शीघ्र भगवत्प्राप्ति का उपाय बताते हुए ब्रह्मवेत्ता संत ने कहा : "**जब साधक भक्ति करते हैं, अन्तर्मुख होते हैं, मौन रहने का अभ्यास करते हैं, एकांत में रहते हैं तब उनकी मानसिक शक्तियों का विकास होता है।**"

पूज्य बापूजी के आगामी सत्संग

देहरादून में, १५ से १७ जून २००२, परेड ग्राउण्ड। फोन : (०१३५) ७८०८७०, ६५३४८९.
जयपुर में, २२ से २४ जून २००२, भवानी निकेतन स्कूल मैदान। फोन : (०१४१)४६४८३२, ४०५०९९, ३६१६०९. *(पूनम दर्शन : २४ जून)*.

सत्संग तीरथ सबसे चंगा। यहीं है यमुना यहीं है गंगा॥
हरिद्वार में गंगा-स्नान के साथ-साथ, सत्संग-अमृतपान करके धन्यता का अनुभव किया पूर्णिमा व्रतधारी और अन्य भक्तों ने।
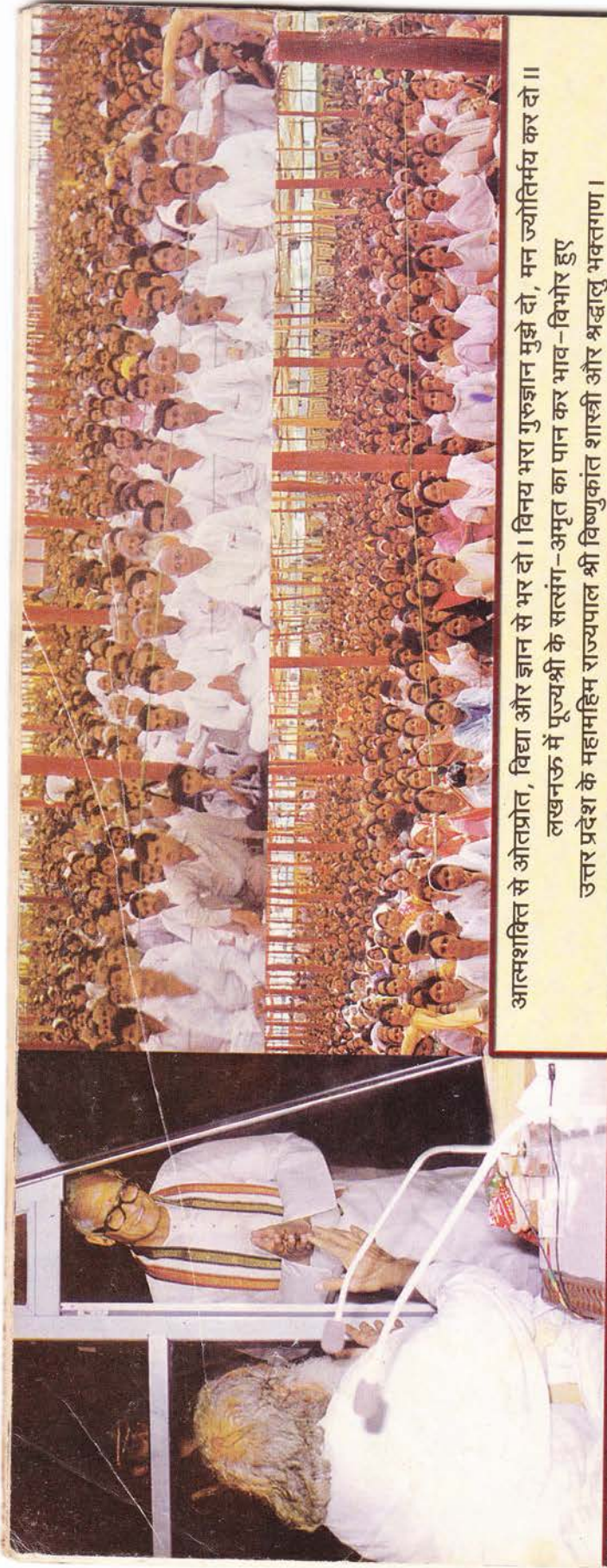
आत्मशक्ति से ओतप्रोत, विद्या और ज्ञान से भर दो। विनय भरा गुरुज्ञान मुझे दो, मन ज्योतिर्मय कर दो ॥
लखनऊ में पूज्यश्री के सत्संग-अमृत का पान कर भाव-विभोर हुए
उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल श्री विष्णुकांत शास्त्री और श्रद्धालु भक्तगण।

संत हृदय नवनीत समाना... दीन-दुखियों की पीड़ा देखकर पूज्य बापूजी का हृदय करुणा से भर जाता है।
लखनऊ (उ.प्र.) में अपाहिजों को पूज्यश्री के करकमलों द्वारा तीन पहिये की साइकिलें प्रदान की गयीं,
साथ में हैं श्रद्धेय श्री नारायण साँईं।

R.N.I. NO. 48873/91 REGISTERED NO. GAMC/1132/2002 LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH.
BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE NO. 236. REGD. NO. TECH/47 833/MBI/2002 POSTING FROM MUMBAI 9-10 OF EVERY MONTH.
DELHI REGD. NO. DL-11513/2002 WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE NO. U(C) 232/2002 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.